अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

सौर जेष्ठ ३१, शक १८७९ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार
वार्षिक मूल्य ६) एक प्रति २ आना

विश्वशांति और भूदान

मनुष्य पर प्रभुत्व लादने की भावना ने ही युद्धों को जन्म दिया है। उपनिवेशवाद उसका ताजा, प्रकट और जीता-जागता नमूना है।

भारत का भूदान और ग्रामदान-आंदोलन, जिसके द्वारा स्वेच्छा से अपनी निजी मालिकयत छोड़ने के लिए जनता को समझाने में सफलता मिली है, विश्वशांति का सही हल है। लेकिन शायद, मनुष्य-जाति ऐसे सही उपायों को तब तक स्वीकार नहीं करेगी, जब तक कि वह तमाम दूसरे टुटपूंजिये और तात्कालिक रास्ते नहीं आजमा लेती है! लेकिन विनोबाजी का भूदान-आंदोलन उस आदर्श समाज-प्राप्ति का एकमात्र रास्ता है, जिसके द्वारा युद्ध की संभावना ही समाप्त की जा सकती है।

—काका कालेलकर

(जागतिक शांति-परिषद कोलंबो, ता० ११-६-'५७ के भाषण से,)

वर्ष-३, अंक-३८ ॥ राजघाट, काशी ॥ शुक्रवार, २१ जून, '५७

समाजवाद का सर्वोत्तम साधन : ग्रामदान

(जयप्रकाश नारायण)

ग्रामदान समाजवाद का व्यावहारिक रूप है और प्रजा-समाजवादी दल को इस समय इससे अधिक अच्छा व्यावहारिक कार्यक्रम दूसरा कोई मिल नहीं सकता। बुद्धिजीवी लोग अब तक आदर्शवादी और व्यावहारिक पहलुओं से भूदान-आन्दोलन की टीका करते थे, किन्तु ग्रामदान-आन्दोलन के प्रादुर्भाव ने भूदान के प्रति की सारी आलोचनाएँ समाप्त हो गयी हैं। यहाँ तक कि केरल की कम्युनिस्ट सरकार के विधिमंत्री ने भी ग्रामदान-आन्दोलन का खुल कर समर्थन किया और सार्वजनिक रूप से यह स्वीकार किया कि जमीन की मालकियत कानून से खतम नहीं की जा सकती।

प्रधान मंत्री पं० नेहरू और कांग्रेस-अध्यक्ष श्री ढेबरभाई ने भी ग्रामदान-आन्दोलन की बड़ी प्रशंसा की है। सारे जगत् की सहानुभूति आज इस विचार को मिल रही है। ग्रामदान के पूरे परिणाम समाजवाद और सच्चे साम्यवाद के परिणामों से शायद ही अलग हों। ग्रामदान एक ऐसा सामाजिक ढाँचा बनाना चाहता है, जहाँ सभी खुश होंगे। वास्तव में सर्वोदय का विचार ही सच्चा समाजवाद है, जो सबके हित की कामना करता है।

कानून की अपनी मर्यादाएँ होती हैं। वर्तमान प्रजातांत्रिक प्रणाली में बहुसंख्यक लोग अल्पसंख्यकों के विरुद्ध कानून बना कर उनको दबा सकते हैं, किन्तु वे उनके विचार और विश्वासों को नहीं बदल सकते। यह काम सिर्फ समझाने से ही हो सकता है। इसलिए कानून को समाज में क्रांति हो जाने के बाद ही आना चाहिए, उसके पहले नहीं। जहाँ हिंसात्मक क्रांतियाँ हुई हैं, वहाँ भी कानून तभी बना है, जब कि जनता खेतों और कारखानों पर अपना कब्जा कर चुकी थी।

आज तो हालत यह है कि समाजवादी कानूनों में विश्वास करने वाले लोग भी व्यक्तिगत आय की मर्यादा निर्धारित करने के लिए तैयार नहीं हैं, क्योंकि वे मानते हैं कि उससे व्यक्ति की कार्य-प्रेरणा पर भी मर्यादा आ जायगी। इस तरह संपूर्ण विश्व के समाजवाद के सामने आज कार्य-प्रेरणा की एक बड़ी गंभीर समस्या उपस्थित है।

विनोबाजी का ग्रामदान-आन्दोलन व्यक्ति में त्याग की भावना पैदा करके, आज के समाजवाद की यही सबसे बड़ी समस्या हल करने की कोशिश कर रहा है।

कानून के द्वारा जमीन का बँटवारा हो सकता है, किन्तु कानून से जमीन की व्यक्तिगत मालकियत खतम नहीं की जा सकती। एक ऐसे देश में, जहाँ सत्तर फी सदी लोग जमीन के छोटे या बड़े मालिक हैं, कोई भी राजनीतिक दल, जो सत्ताप्राप्ति के लिए लोगों के वोटों पर निर्भर रहता है, उनकी इच्छा के विरुद्ध जमीन की मालकियत खत्म करने की कोशिश करके बहुसंख्या को नाराज नहीं कर सकता। केरल में न तो पुरानी कांग्रेसी और न प्रजा-समाजवादी सरकारें और न वर्तमान साम्यवादी सरकार ही कानून से जमीन की मालकियत खत्म करने की बात सोच सकती हैं।*

* बिहार के प्रजासमाजवादी दल के वार्षिक अधिवेशन में की गयी अपील, पटना, ता. ९-६-५७

आज का यक्ष-प्रश्न और उसका उत्तर !

(अच्युतराव पटवर्धन)

देश को आजादी मिली, लेकिन देश की समस्याएँ हल नहीं हुईं। राजनीतिक आजादी देश की प्रगति के लिए जरूरी तो है, लेकिन वह साध्य नहीं, साधन है। परन्तु इस साधन का साध्य क्या है? जनता और राज्यकर्ता, दोनों इस सम्बन्ध में गलत-फहमी में हैं। भौतिक प्रगति राजनीतिक आजादी के द्वारा हो सकती है और कुछ हद तक वह यहाँ हुई भी है, लेकिन केवल उससे देश का उत्कर्ष नहीं सध सकता। इसीलिए निराशा और कटुता फैलती है। राजनीतिक आजादी के बाद, लम्बे अरसे से संचित अतृप्त आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए कोशिशें तो हुई हैं, लेकिन जिस शक्ति के आधार से स्वतन्त्रता की प्राप्ति हुई, उसी जनशक्ति को हम भूलने लग गये हैं और आजादी के पहले जो नेता जनशक्ति पर निर्भर थे, वे ही राजसत्ता को सर्वस्व मान कर जनशक्ति की उपेक्षा करने लग गये हैं। समाज-परिवर्तन के लिए भौतिक उन्नति की आवश्यकता है। राजसत्ता द्वारा उसकी पूर्ति सम्भव भी है। लेकिन नूतन समाज की स्थापना के लिए जिन नये जीवन-मूल्यों की आवश्यकता है, वे जन-मानस में स्थिर करने के कार्य के लिए शासन-संस्था असमर्थ है। भौतिक उन्नति से नैतिक उन्नति नहीं सधती। आजादी के बाद औद्योगिक और भौतिक प्रगति तो हुई, लेकिन नैतिक प्रगति नहीं हुई; बल्कि समाज का नैतिक उत्थान शासन-सत्ता के द्वारा हो सकेगा, यह आशा भी अब लुप्तप्राय है। आज का यक्षप्रश्न यही है कि नवसमाज के लिए प्राणभूत जीवन-मूल्यों की स्थापना जन-मानस में कैसी हो?

गांधीजी ने इस देश को असाधारण नेतृत्व दिया। लेकिन उससे भी अधिक महत्त्व की दृष्टि उन्होंने यह दी कि हिन्दुस्तान का सवाल देहातों का सवाल है, यह सोचने के लिए प्रेरित किया। देश की प्रगति का चिह्न नगरों का उत्कर्ष नहीं, देहातों की उन्नति है। यह दृष्टि हम कसौटी पर लगा कर देखें, तो क्या दीख पड़ेगा? देशहित के लिए बनी हुई योजनाएँ शहरों पर जितना खर्च करना चाहती हैं, उतना देहातों पर नहीं। पाँच हजार की जन-संख्यावाले गाँवों पर जितना पैसा खर्च होगा, उससे पाँच गुना पैसा पाँच हजार से ऊपर की जन-संख्यावाले गाँवों पर ही खर्च होने वाला है। देहातों और शहरों के बीच की ऐसी अनेक विषमताएँ कैसे दूर होंगी, यही आज की मूलभूत समस्या है। आज का कोई भी राजनीतिक तत्त्वज्ञान इसका उत्तर नहीं दे पा रहा है। भूदान की ओर देखने की मेरी दृष्टि यही है कि क्या वह यह समस्या हल करेगा?

भूदान का सन्देश

मैं आग्रहपूर्वक नहीं कह सकता कि भूदान से सारी समस्याएँ हल हो जायेंगी। लेकिन जहाँ राजसत्ता असमर्थ सिद्ध हुई, वहाँ जनता को कुछ न-कुछ करना होता है। वह कैसा और क्या किया जाय, यही भूदान के द्वारा विनोबाजी ने बता दिया है। यह रास्ता नया और वीरथी का है। लेकिन केवल भूमि देने और उसका वितरण करने मात्र से देहातों की समस्या हल नहीं होती है। और मुख्य प्रश्न यही है। किसी भी जिले में जाकर देखिये, जमीन का कटाव बढ़ता जा रहा है। लेकिन किसीको उसकी चिन्ता नहीं। ऐसे अनेक प्रश्नों पर राजनीतिक दृष्टि से नहीं सोचा जा सकता।

www.vinoba.in

भूमि की स्वामित्व-भावना ने आज देहातों के पुरुषार्थ को सीमित कर दिया है। भूदान उसी स्वामित्व के विसर्जन का आंदोलन है। भूमि का निजी स्वामित्व विसर्जन करके राजसत्ता की मदद न चाहते हुए, अपनी उन्नति देहात खुद करें, यही भूदान का संदेश है।

विश्वनागरिकता की राह पर

देहातों का आज का संकुचित स्वरूप दूर होकर वहाँ का ग्रामीण विश्व के नागरिक के रूप में कैसे रह सकेगा, इसकी संभावनाएँ ग्रामदानी गाँवों में हो सकती हैं। ग्रामदान के प्रयोग की सबसे बड़ी शक्ति जनशक्ति ही है। ग्रामदानी गाँवों का किसान स्वामित्व-भावना से मुक्त होकर अपने छोटे से परिवार का रूपांतर ग्राम परिवार में कर लेता है, तो स्वभावतः उसकी दृष्टि व्यापक बनती है। ग्रामदानी गाँवों के लोगों को प्राप्त होने वाली यह दृष्टि अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

इन दिनों राजनीतिक मत-मतांतरों का बोलबाला है। पर उनके राजनीतिक कार्यक्रमों से देहातों की समस्याएँ हल नहीं होंगी। दूसरे देशों का बना-बनाया तत्त्वज्ञान स्वीकार करने की तैयारी आज भी हमारे युवकों में दीख पड़ती है। स्वतन्त्र विचार करने की शक्ति ही मानो उनमें नहीं है। कंधे पर कुदाल लेकर एक बार वे श्रमदान की तैयारी भी कर लेंगे, लेकिन स्वतन्त्र विचार नहीं करेंगे! विनोबा के भाषणों में स्वतन्त्र विचार-शक्ति प्रकट होती है। उनके विचारों की कुछ दलीलें अगर नहीं जँचती हैं, तो थोड़ी देर के लिए आप उन्हें अलग रखिये, लेकिन उनकी ओर दुर्लक्ष्य करने से अब काम नहीं चलेगा।

पहले स्कूल-कॉलेज के काफी विद्यार्थी समर्पण में आनन्द मानते थे और व्रतधारी बन कर देश की सेवा में अपने को खपा देते थे। समर्पण का वह वैभव आज विद्यार्थियों के लिए अप्राप्य हो गया है। कोई कर्तव्य या कार्यक्षेत्र उनका आवाहन नहीं कर पा रहा है। परन्तु यह एक ऐसा मौका उनके लिए प्रस्तुत हुआ है, जो उनके कर्तृत्व को आवाहन कर रहा है और ग्रामदानी गाँवों में उनके पराक्रम के लिए विशाल क्षेत्र खोल चुका है।†

† पुणें, २९ मई, कार्यकर्ताओं की सभा में मराठी 'भूदान-यज्ञ' से।

ग्रामदान की भूमिका

(दादा धर्माधिकारी)

ग्रामदान की भूमिका का विचार केवल व्यावहारिक दृष्टि से मैं आपके सामने रखना चाहता हूँ। ग्रामदान का यह सिद्धान्त अत्यन्त रमणीय सिद्ध हुआ है और देश के सभी पक्षों तथा विचारकों ने इसे मान लिया है। लेकिन शंका यही आती है कि क्या यह चीज व्यावहारिक भी है?

दुनिया में जितने भी क्रान्तिकारी हुए हैं, वे भी अपने जमाने में अव्यावहारिक समझे जाते रहे। मार्क्स की भी यही गति हुई। उसके बारे में तो कहा गया कि वह विज्ञान की अन्तर्सृष्टि का प्राणी है। इस तरह जो आज अव्यावहारिक माने जाते हैं, वे ही कल व्यावहारिक बन कर रहते हैं। मुट्ठी भर लोग अपनी निष्ठा से जो क्रान्ति करते हैं, उसीके अनुरूप संसार चलता है। शर्त यही है कि वह क्रान्ति वस्तु-निष्ठ हो, वस्तु-विमुख न हो। वह युग की आकांक्षा और आवश्यकता, दोनों की पूर्ति करती हो।

आज दुनिया में शान्ति की चाह है। जनरल मेक आर्थर का कहना है कि जिस दिन आज के राष्ट्रों का निःशस्त्रीकरण होगा, वह दिन वैसा ही शुभ दिन होगा, जिस दिन महाप्रभु ईसा ने गिरि-प्रवचन किया था! राष्ट्रपति आइजन हॉवर का कहना है कि "अब तक तो दुनिया को शान्ति की 'आकांक्षा' मात्र थी, पर अब इसकी अत्यन्त 'आवश्यकता' हो गयी है।" लेकिन कमी केवल यह है कि कोई राष्ट्र निःशस्त्रीकरण की हिम्मत नहीं कर रहा है। मानव के हृदय में यह हिम्मत पैदा करना विज्ञान की भी सामर्थ्य के बाहर हो गया है। इस वास्ते दुनिया एक प्रश्न-चिह्न निकाल कर भारत से पूछ रही है कि क्या वह अपने सवालों को बिना हथियार उठाये, शान्ति से हल कर सकता है? इसका साक्षात् उत्तर विनोबा हैं। भूक्रान्ति की अनोखी प्रक्रिया के द्वारा वह संसार को आश्वासन दे रहा है कि शान्तिमय क्रान्ति से ही समस्याएँ हल हो सकती हैं। संत की क्रान्ति वैरागी के जैसी नहीं, माता के जैसी है, जो सबको मिलाने वाली है। इसलिए इस देश में सशस्त्र क्रान्ति होना एकदम अव्यावहारिक है, क्योंकि वह दिलों को लड़ाती और काटती है।

क्रांति का आधार

क्रान्ति सशस्त्र हो या निःशस्त्र, वह बिना विचार के नहीं होती। च्यांगकाई शेक के पास सशस्त्र फौज थी। माओत्से तुंग के पास बहुत कम शस्त्र थे। लेकिन च्यांग के सिपाही भाग-भाग कर माओ के पास आते थे और उसे हथियार भी दे देते थे। माओ ने कहा था कि च्यांग के सिपाहियों को खदेड़ने के लिए झाड़ुएँ ही काफी थीं, क्योंकि उनके पास कोई विचार नहीं था! इस वास्ते विचार और निष्ठा का स्थान बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। गांधी ने हमें साधन ही ऐसा दिया कि प्रतिपक्षी की निगाह में ही हमें ऊँचा उठा दिया। महत्त्व संख्या का नहीं है। क्रान्ति गुणात्मक होती है।

हमारा देश कृषि-प्रधान है, जहाँ छोटे-छोटे मालिकों की तादाद बहुत ज्यादा है। जब ये अनेक मालिक अपनी मालकियत को बेड़ियों को तोड़ देते हैं, तो उनका मानस निखर सकता है। उनके इस सामुदायिक पुरुषार्थ का नाम ही ग्राम-दान है। विनोबा कहते हैं कि भूदान, सम्पत्तिदान और श्रमदान, तीनों का समावेश 'ग्रामदान' में होता है।

विज्ञान एक-एक इन्द्रिय का काम आज खुद करता जा रहा है। तो जिस इन्द्रिय का प्रयोजन नहीं रह जायगा, वह कब तक सलामत रहेगी? मनुष्य को अनुपयोगी परिश्रम में ही आनन्द आता रहा, तो उसमें मानवता ही नहीं बचेगी। संयोजन ऐसा होना चाहिए कि एक मनुष्य को दूसरे के जीवन में रुचि पैदा हो। मानवता, मनुष्य का निर्गुण रूप है। सगुण रूप है, उसका पड़ोसी। ध्यान विराट् का हो, प्रत्यक्ष उपासना पड़ोसी की हो। ध्यान अव्यक्त का हो, उपासना सगुण की हो। यह ग्रामराज कहलाता है।

ग्राम का अभिप्राय ऐसे समाज से है, जहाँ अलग-अलग व्यवसाय एक ही जगह चलते हों और अलग अलग व्यवसाय करने वाले एक-दूसरे को पहचान सकें। जिस व्यवस्था में चीज महँगी होती है और आदमी सस्ता होता है, वह पूँजीवाद है। जिसमें चीज सुलभ हो और मानव प्रतिष्ठित होता हो, वह समाजवाद है। जिसमें जीवन मात्र की प्रतिष्ठा मूल आधार हो, वह सर्वोदय है।

यन्त्र के विरोध का सवाल ही क्या है? माँग केवल इतनी है कि यन्त्र मेरी इन्द्रियों तथा अवयवों की शक्ति को बढ़ाये, मेरे आनन्द को बढ़ाये और मेरे व्यवसाय और कला को न छीने। इस तरह तीन बातों पर ध्यान रखना जरूरी है: १. मनुष्य की जरूरत पूरी होनी चाहिए, २. उसकी शक्ति व कला का विकास होना चाहिए और ३. उसकी मानवता का विकास होना चाहिए। चौथी बात और है—पशु की शक्ति और कला का भी विकास होना चाहिए। इस चतुर्मुखी माँग की पूर्ति करते हुए आप जिस यन्त्र का चाहें, उपयोग करें।

सर्वोदय-समाज में आर्थिक दृष्टि से पाँच बातों पर ध्यान रखना होगा—(१) उत्पादन एक दूसरे के लिए होगा। (२) उत्पादन के साधन ऐसे होंगे कि इन्द्रिय की शक्ति को बढ़ायेंगे, पर कला नहीं छीनेंगे। (३) यह साधन पशु की शक्ति और कला को भी बढ़ायेंगे और उसकी जगह नहीं लेंगे। (४) उपयोग साथ-साथ होगा और (५) उत्पादन से मानवता का विकास होगा।

इसी उत्पादन को गांधी ने 'स्वदेशी धर्म' नाम दिया था।*

*सार्वजनिक भाषण से, प्रयाग ता० २७-५-'५७

...देवदूत स्वर्ग के एक बन्द कमरे के द्वार पर रुका—"तुम जिन ज्ञानियों की प्रशंसा जीवन-पर्यंत करते रहे, आओ, मैं तुम्हें उनसे मिलाऊँ।" सहज-स्वाभाविक उत्सुकता से मैंने कमरे के अन्दर प्रवेश किया, तो सात-आठ बिल्लियाँ अंदर बैठी गुर्रा रही थीं। आपस में लड़तीं-झगड़तीं एक-दूसरे को वे बड़ी निष्करुणता से कोस रही थीं। आश्चर्य-चकित हो मैं देवदूत की ओर मुड़ा। वह मुस्कराया और फिर शांत-स्थिर वाणी में बोला—"ज्ञान का रहस्य कुछ और है एवं ज्ञान का अहम् कुछ और। जिसने इस रहस्य को पकड़ा, वह पैगंबर बन गया और जिसने अहम् को सर्वस्व माना, वह बना भू पर खुदा का ठेकेदार और स्वर्ग में ये—जिन्हें तुम देख रहे हो!"

—फ़रीदुद्दीन अत्तार

www.vinoba.in

हमारी ग्रामगोष्ठी:

तीन काल की कहानी: किशनू की जबानी !

(किशन सहाय पुरोहित, दूदू)

अभी की तो बात है !

प्रातःकाल हुआ भी न था कि मुर्गे ने बाँग दी, झट उठ कर माँ ने चक्की पीसना शुरू किया तथा किशनू अपने बैलों को लेकर खेत पर चराने के लिए चल पड़ा। खेत पर पहुँचा। उस समय आकाश में भगवान् भास्कर की पहली किरण, प्रभात की लालिमा, जड़-चैतन्य का नया उत्साह, पक्षियों की आनन्दमयी चहचहाहट तथा प्राची के मुख की अरुण ज्योति उसके दो बैलों के साथ उसका स्वागत कर रहे थे। अहा ! कैसा सुन्दर-सुखमय जीवन है ! एकाएक में और गोविन्द भैया भी वहाँ पहुँच गये। गोविन्द ने राम राम किया और कहा, भैया किशनू ! इस साल तो आपकी कपास, गन्ना, मक्का तथा तिल की फसल अपने गाँव में सबसे अच्छी है !

किशनू ने कहा, भैया ! होती क्यों नहीं ? घर में भी १५ आदमी हैं, याने ३० हाथ ! गत साल तो हमने बाजार से कुछ भी नहीं खरीदा।

बातें कर ही रहे थे कि रामप्यारी आ गयी। रामप्यारी ने कहा, लीजिये भैया, यह गरम-गरम बाजरे की खिचड़ी, गाय के दूध का जमाया दही और यह कल ही तिलों की घानी निकलवायी थी न, उसका ताजा तेल तथा यह मोहन मामा के घर का बना गुड़। देखो, कितना अच्छा है। सब लोग इसकी तारीफ कर रहे थे।

किशनू ने भोजन किया तथा कुछ देर विश्राम करने के बाद फिर खेत पर काम करना शुरू कर दिया। रामप्यारी भी घर के लिए रवाना हो गयी। रास्ते में उसे रामू बुनकर मिला। रामू ने कहा, माँजी ! यह अपनी साड़ियाँ तथा गाढ़े ले जाओ। मैं खुद ही इन्हें लेकर आ रहा था। अबके तो सूत क्या था, कमाल ही था ! देखो, कितने अच्छे कपड़े बने हैं।

रामप्यारी ने रामू को धन्यवाद दिया और घर को रवाना हो गयी। अपने हाथ के कते सूत के कपड़ों को देख कर रामप्यारी बहुत प्रसन्न होती हुई घर आ गयी। माँ भी इन कपड़ों को देख कर बहुत प्रसन्न हुई। किशनू भी शाम को खेत पर से काम करके घर आ गया। भोजनादि से निवृत्त हो कुछ देर साथियों से बातचीत करके सो गया। इसी तरह इनके दैनिक जीवन का क्रम रहता था। कैसा सुन्दर, सुखमय स्वावलंबी ग्राम-जीवन है ! हाथ-चक्की का आटा, शुद्ध घानी का तेल, गाँव का गुड़, शक्कर, घी, गाँव की गाँव में बनी खादी तथा अन्य दैनिक उपयोग में आने वाले आवश्यक सामान का व्यवहार। कहीं भी छल-छिद्र नहीं, किसी भी चीज में मिलावट नहीं।

और जब मशीनों ने धावा किया !

अब गाँव में आटे की चक्की तथा तेल-मिल भी लग गयी है। अनाज, गन्ना तथा कपास शहरवाले ले जाने लग गये। उसके बजाय शहरों से मिल की चीनी, मिल का तेल तथा मिल का कपड़ा व 'डालडा' गाँवों में आने लगा। अब क्या था ? गाँव में बेकारी और शोषण का तांडव होने लगा। कितने ही आदमी गाँव छोड़ कर शहरों में आ बसे। आखिर किशनू को भी बेकारी का शिकार होकर नौकरी के लिए शहर में आना पड़ा। काफी कोशिश करने पर किशनू को एक मिल में काम मिल गया। बेचारा आठ घंटे मिल में काम करता है। मिल में जहाँ देखो असंतोष। एक के द्वारा दूसरे का शोषण तथा चारों ओर निराशा ही निराशा। बेचारा किशनू शाम को थका-माँदा घर आता है, किन्तु यहाँ भी शांति नहीं। पिताजी के टी. बी. हो गयी है। डाक्टर रोजाना कहता है, इनको खुले, हवादार, साफ मकान में रखिये, किन्तु बेचारा लाचार था। मिल-मालिक द्वारा एक छोटी-सी अँधेरी कोठरी मिली हुई थी। दूसरा साफ मकान लेता है, तो इतना अधिक किराया कि वह उसके लिए संभव नहीं था। मिलों के तथा शहरों के इस वातावरण के कारण पिताजी के अलावा माँ, एक भाई तथा एक बहन के भी टी. बी. की बीमारी हो गयी। आर्थिक कठिनाई के कारण बेचारा इनका निदान भी नहीं करा सका और पिताजी, माताजी एक भाई तथा एक बहिन का इसी बीमारी के कारण प्राणान्त हो गया। एकाएक मिल में घाटा लग गया और कामगारों की छँटनी होने लगी। इसी छँटनी में बेचारे किशनू का भी नंबर आ गया। मिल-मालिक ने मकान खाली करवा लिया। अब बेचारा किशनू बड़ा दुखी था। रहने के लिए मकान नहीं, खाने के लिए रोजगार का कोई साधन नहीं। कई दिन बीत गये। आखिर वह दिन भी आ गया कि बेचारे सपरिवार फुटपाथ पर सो कर अपने दिन निकालने लगे और बोझा ढोकर अपना पेट पालने लगे। आखिर यह बेकारी का नग्न तांडव किशनू से नहीं सहा गया और उसे वापिस गाँव की शरण में आना पड़ा।

और जब गाँव ग्रामदानी बना !

अब यहाँ भूदान का संदेश पहुँच चुका था। उसका गाँव ग्रामदानी भी बन गया था ! जमीन की निजी मालकियत खत्म हो गयी थी। जरूरत के मुताबिक हरेक को जमीन मिलती और कम पड़ती तो परिवार के समान उतने में ही काम चलाते। खेती की मदद के लिए घर-घर में अंबर चरखे चल रहे थे। सब लोग स्वावलंबी हैं। गाँव में खादी-ग्रामोद्योगों का बोलबाला है। जिधर देखो उधर उत्साह, शांति तथा संतोष का वातावरण है। किशनू भी अब इन्हीं लोगों की तरह पूर्ण स्वावलंबी बन गया है। किशनू की पत्नी शान्ता ने अब एक अंबर चरखा ले लिया है। वह एक पढ़ी-लिखी भद्र महिला है। गाँव की सारी बहनों के प्रौढ़ शिक्षण तथा अंबर-शिक्षण का भार भी उसने ले लिया है। अब गाँव का अनाज, गाँव का तेल, गाँव का गुड़, गाँव का शुद्ध घी तथा गाँव का बना कपड़ा (खादी) व अन्य ग्रामोद्योगी वस्तुओं का उपयोग करना वह अपने लिए सौभाग्य समझता है और इसीमें वह अपना धर्म मानता है। सब लोग हिलमिल कर रहते हैं—मानो सारा गाँव एक ही परिवार है।

आज किशनू को आये करीब एक साल हो गया है। किन्तु अब भी जब मलों का, शहरों की बेकारी का व शोषण का वह तांडव-चित्र उसके सामने आता है, तो वह पसीना-पसीना हो जाता है ! अब तो किशनू ने अपने छह लड़कों में से एक लड़के दुर्गा को भूदान तथा खादी-ग्रामोद्योग के लिए अर्पण कर जनता के सामने एक आदर्श भी पेश किया है। महिलाओं में जागृति लाने का काम उसकी पत्नी शान्ता करती है तथा भूदान और खादी-ग्रामोद्योग का काम दुर्गा। वह भी ग्रामराज की स्थापना में अपना योग यथा शक्ति दे रहा है। आज उसका अपना ध्येय भूदान-मूलक खादी-ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति की सफलता ही है।

किशनू इनके क्षेत्र का भूदान-सेवक भी है। वह गाँववालों को भूदान और सर्वोदय का विचार समझाया करता है।

और अब वे लोग ग्रामराज्य की राह पर हैं !

ग्रामदान के लिए देश का आवाहन

(सिद्धराज ढड्ढा)

[ता० ३ जून को काशी में प्रेस-कॉन्फरेंस में दिया हुआ वक्तव्य। इसके बाद ग्रामदानी गाँवों के निर्माणकार्य के प्रश्नोत्तर हुए, जिनमें मंगरौठ आदि के काम की जानकारी श्री ढड्ढाजी ने विस्तार से पत्रकारों को दी। —सं०]

हमारा विश्वास है कि ग्रामराज की स्थापना से ही हमारी आज की सारी समस्याएँ हल हो सकती हैं और ग्रामराज की स्थापना का एकमात्र उपाय है: ग्रामदान, जिसके लिए नौवें सर्वोदय-सम्मेलन ने देश का आवाहन किया है। बेकारी और अन्नसंकट आज की सबसे बड़ी समस्याएँ हैं और ग्रामराज के बिना इनका स्थायी समाधान असम्भव है, इसीलिए सर्व-सेवा-संघ का सारा जोर अब ग्रामदान की ओर है।

ग्रामदानी गाँवों को पूर्ण रूप से आत्मनिर्भर बनाने की हमारी योजना का मूल आधार यह है कि प्रतिदिन काम में आने वाली जीवनोपयोगी वस्तुओं का उत्पादन-यथा अन्न, वस्त्र तथा कृषि से सम्बद्ध अन्य सामग्री का हमें आयात न करना पड़े और गाँव की जरूरत की सारी चीजें गाँववाले स्वयं तैयार कर लें। यह तभी सम्भव है, जब कि भूमि पर व्यक्तिगत स्वामित्व न रहे और वह सारे गाँव की समझी जाय। गाँव के सभी लोग जब जमीन को अपनी समझने लगेंगे एवं गाँव-समिति गाँव के सभी लोगों को एक ही परिवार का सदस्य मान कर व्यवस्था करेगी, तब आज जैसी अन्नाभाव आदि की-सी अवस्था तो रहेगी ही नहीं, देश में सच्चा समाजवाद भी स्थापित हो जायगा।

ग्रामदान के इस कार्यक्रम को अधिक सक्रिय और सफल बनाने के लिए हमने आगामी सितम्बर में मैसूर में अखिल भारतीय स्तर पर एक बैठक का आयोजन किया है, जिसमें प्रायः सभी दलों के प्रमुख नेताओं को आमन्त्रित करने का विचार किया गया है। इस सम्बन्ध में सर्व-सेवा-संघ का एक प्रतिनिधि-मण्डल हाल में ही दिल्ली में राष्ट्रपति, प्रधान मन्त्री, काँग्रेस अध्यक्ष, श्री डांगे, श्री कृपालानी आदि से मिला था। अखिल भारतीय सर्व-सेवा-संघ के अध्यक्ष श्री धीरेन्द्रभाई भी प्रतिनिधि-मण्डल में थे।

यदि सरकार ग्रामदान के क्षेत्रों में सामुदायिक विकास-योजनाओं को कार्यान्वित करना चाहे, तो हम इस दिशा में पूरी सहायता देने के लिए तैयार हैं।

---

www.vinoba.in

"भाइयो, मेरा भी हिस्सा लेकर जाइये!"

(पी० वेंकोब राव)

गाँव था मल्लापूर, तहसील सोडूर, जिला वेल्लारी। गर्मी के दिन थे। दोपहर की खूब गर्मी में चल कर हम तीन बजे गाँव में पहुँचे। गाँव में जाते ही प्रभात फेरी हुई, भूदान-घोषों से वातावरण गूँज उठा। एक मंदिर में सब लोग इकट्ठे हुए। भूदान-विचार समझाया गया। बाद में लोगों से चर्चा भी हुई। एक के बाद एक खड़े होकर भूदान घोषित करने लगे। हम दान-पत्र भरने लगे। लगभग छः बज गये होंगे। हम सब दूसरे गाँव के लिए रवाना हुए।

गाँव छोड़ कर के आधा फर्लांग हम आये होंगे, इतने में एक आवाज सुनायी दी—"भाइयो ठहरिये, मेरा भी एक हिस्सा लेकर जाइये।" हम सब चौंक पड़े। इतने में उक्त वयोवृद्ध साथी दौड़ते हुए हमारे पास आकर खड़े हुए। साँस जोर से चल रही थी, शरीर पर कपड़ा नहीं था, घुटनों के ऊपर एक फटा हुआ कपड़ा सिर्फ लाज बचाने के लिए ढँका हुआ था। किसी बीमारी से उनका बदन काँप रहा था। हाथ लगा करके देखा। खूब बुखार था।

"क्यों भाई, इस बुखार में क्यों आये?"

"मैंने आप लोगों के भाषण सुने, देने की इच्छा हुई। लेकिन जमीन मेरे नाम पर नहीं थी, इसीलिए सभा में मैं नहीं कह सका। सभा के बाद मैं घर गया, पत्नी को सारा विचार समझाया और कहा, 'तुम भी एक एकड़ लिखा दो न?" उसने पूछा : "आपने सभा में ही क्यों नहीं लिखा दी?" मैंने कहा, "जमीन मेरे नाम पर नहीं थी, इसीलिए थोड़ी हिचकिचाहट मालूम हुई।" उसने कहा—"क्या मुझ पर आपको इतना विश्वास नहीं है? मेरे नाम पर हुई, तो क्या हुआ? **जमीन जोतने वाले तो आप हैं, इसलिए उस पर आपका भी हक़ है।** जाइये, पाँच एकड़ में से एक एकड़ लिखवाइये। यही हक़ीक़त है।"

"अच्छा भाई, आपका नाम क्या है?" हमने पूछा।

उन्होंने कहा—"सण्ण चित्तप्पा" और आगे बढ़ कर कहा—"भाइयो, आज नहीं तो कल मैं मरने वाला हूँ। बीमारी से मैं तंग आ गया हूँ। धर्म के काम में मेरा भी एक हिस्सा हो।"

हमने हाथ जोड़ कर उन्हें प्रणाम किया, दानपत्र लिया और अगले गाँव को रवाना हुए।

रास्ते में मुझे "जोतने वाले आप हैं, इसलिए उस पर आपका भी हक़ है," ये उनकी पत्नी के शब्द याद आने लगे। भूदान-विचार एक अनपढ़ देहाती औरत के मुँह से हम लोगों ने सुना। भगवान् की कृपा से भूदान का विचार कैसे जन-मानस में फैल गया है!

अंधेरा हो रहा था। रास्ते में थोड़ी मुश्किल भी हो रही थी। जंगल का रास्ता था। भूदान-मंत्र जपते-जपते हम आगे बढ़ रहे थे। इतने में हमको एक चिराग दिखायी दिया। 'तिप्पन मरडो' गाँव को हम आनेवाले हैं—यह सूचना पहले ही दे दी गयी थी। इसीलिए गाँव के लोगों ने एक आदमी को चिराग लेकर रवाना किया था।

तुरही और भेरी से हमारा स्वागत हुआ। गाँव में उत्सव हुआ। रात को सभा भी हुई। सभा के बाद भूमिवान लोग एक के बाद एक उठ कर चलने लगे। सभा में हमको जमीन नहीं मिली।

सवेरे हम भूमिवानों के घर-घर गये। लेकिन वे लोग हमको ठगने लगे। एक भूमिवान के घर हम गये, तो अंदर से आवाज आयी कि "मुझे बुखार हुआ है, इसलिए बाहर नहीं आ सकता!" अन्य भूमिवान लोग घर छोड़ करके बाहर ही चले गये थे।

परन्तु दोपहर के बाद हम सबको भूमिवान लोगों ने ही बुलाया और भूदान देने का निश्चय सुनाया। हमको आश्चर्य लगा कि यह सब क्या है?

वे कहने लगे कि "भाइयो, आज नहीं तो कल हमको जमीन देनी ही पड़ेगी, तो प्रेम से आज ही हम क्यों न दें? इसीलिए हमारा छठवाँ हिस्सा लिख लीजिये।"

दान-पत्र भरे गये। आखिर 'ग्रामदान' के बारे में भी चर्चा हुई। "आज नहीं देने वाले कल देंगे ही"—विनोबाजी का यह वाक्य हमारे कानों में गूँजने लगा!

राहत का नहीं, क्रान्ति का युग

(नेमिशरण मित्तल)

मानव-समाज की आज जो दशा है, उसमें थोड़ा इधर, थोड़ा उधर, हेरफेर, राहत, सुधार-संशोधन और मरम्मत का काम नाकाफी है। आज मानव-सभ्यता एक महान-संकट के किनारे आकर खड़ी हो गयी है। इस संकट से बचने का उपाय यह नहीं है कि हम वर्तमान जीवन-पद्धति में थोड़ा फेर-बदल करके उससे ही चिपटे बैठे रहें। यदि हमने वैसा किया, तो मानव जाति निश्चित रूप से एक भयानक अंत को प्राप्त होगी। आज राहत का नहीं, क्रान्ति का युग है। मौजूदा सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था ने मानव-समाज का कोई भी सदस्य ऐसा नहीं छोड़ा, जिस पर कि उसने आघात न किया हो। उन अनीति-मूलक आघातों के परिणाम कभी-कभी जब तीव्रता से जाहिर होते हैं, तब समाज में कुछ दयावान व्यक्ति आगे आकर लोगों की करुणा को जाग्रत करके पीड़ितों के लिए राहत (रिलीफ) की व्यवस्था कर देते हैं। परन्तु इतने से सभ्यता का परिष्कार या संस्कार नहीं होता है। अब जरूरत इस बात की है कि हम आगे होकर विकृति को जड़मूल से उखाड़ कर संस्कृति की स्थापना करें। रोग की जड़ पर प्रहार करने का नाम है क्रान्ति और बाह्य लक्षणों के शमन के लिए किया जाने वाला उपचार राहत का काम है।

हमारी समस्या

वर्तमान समाज-व्यवस्था इतनी जर्जर हो चुकी है कि उसका बाह्य उपचार अब उसे टिकाने में असमर्थ हो गया है। हमारी अर्थ-व्यवस्था इतनी दूषित हो गयी है कि उससे समाज में असमान अर्थ-वितरण, असमान बुद्धि-विकास और असंतुलित शरीर-विकास को जन्म और पोषण मिला है। उसके द्वारा सम्पत्ति के वैयक्तिक स्वामित्व और केन्द्रित उत्पादन-व्यवस्था को प्रश्रय मिला है तथा सामाजिक मूल्यों का ह्रास हुआ है। उसने समाज के भीतर सम्पन्नता और विपन्नता के दो गढ़ (किले) बना दिये हैं। समाज के जो चन्द लोग सम्पन्नता के गढ़ में कैद हैं, उनका शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास भौतिक सामग्री की विपुलता और अर्थ-मोह के बोझ के नीचे घुट कर साँस छोड़ चुका है। जो लोग विपन्नता (गरीबी) के गढ़ में जा पड़े हैं, उनका विकास परावलम्बन एवं आर्थिक हीनता के कारण तो अवरुद्ध है ही, उन पर एक अतिरिक्त अभिशाप यह है कि उनके मन में हर समय सम्पत्ति के संग्रह और स्वामित्व की लालसा बनी रहती है, जो उनकी तेजस्विता का क्षय कर देती है।

सही तरीका

सम्पत्ति के वैयक्तिक-स्वामित्व या सीमित-स्वामित्व का सिद्धान्त ही केन्द्रित अर्थ-नीति शोषण और युद्ध के लिए जिम्मेदार है। आज का पश्चिमी विचारक अभी इस तथ्य को पूरी तरह ग्रहण नहीं कर पा रहा है। जहाँ कहीं अभाव की भयंकर सम्भावनाएँ दिखायी देने लगती हैं, वहीं कुछ दया-दान, सहायता आदि के तौर पर अभाव-ग्रस्त लोगों को राहत पहुँचाने का काम कर दिया जाता है। परन्तु यह दूर-दर्शिता का मार्ग नहीं है। इस राहत की स्थिति बिल्कुल ऐसी ही है, जैसे किसी बर्तन की तली में छेद हों और उन छेदों को बिना बन्द किये ही उसमें पानी भरना शुरू कर दिया जाय। ठीक ऐसी ही स्थिति आज हमारे समाज की है। जब तक शोषण के द्वार बन्द नहीं होंगे, तब तक कोई भी आर्थिक मदद हमारे कोटि-कोटि पीड़ित, उपेक्षित और शोषित मानवों को सुख नहीं पहुँचा सकती।

शोषण के द्वार

मूल प्रश्न है शोषण के द्वारों को बन्द करने का। हमारे देश में शोषण का पहला द्वार है, भू-स्वामित्व। जब तक भूमि पर से निजी मालिकी का हक समाप्त नहीं होता, तब तक मालिक और मजदूर, ये दो भेद समाज में रहेंगे ही। भूमि को समाज की सम्पत्ति माना जाय और उस पर प्रत्येक व्यक्ति का, जो कि उस पर परिश्रम करना चाहता है, बराबरी का हक माना जाय, तब शोषण का प्रथम द्वार बन्द हो सकेगा। स्वामित्व का अधिकार मिटने से स्वामित्व-सम्बन्धी झगड़े और मुकदमे भी मिट जायेंगे तथा शोषण का दूसरा द्वार—अर्थात् शहर-कचहरी भी बन्द हो जायगा। शोषण का तीसरा परन्तु बहुत महत्त्वपूर्ण द्वार है, केन्द्रित-उद्योग-वाद। आज देहातों के सब उद्योग-धन्धे धीरे-धीरे टूटते जा रहे हैं तथा देहात कच्चा-माल पैदा करने वाले कारखानों का रूप ले रहे हैं। उपभोग की हर एक वस्तु केन्द्रित उद्योगों से लेने के कारण गाँव के लोग अपनी समस्त उपज देकर भी दरिद्र ही बने रह जाते हैं और उद्योगों से सम्बन्धित व्यक्ति संपत्ति संग्रह करते

www.vinoba.in

रहते हैं। इस द्वार को बन्द कर देने से गाँवों में उद्योग-धन्धे खुलेंगे, रोजगार बढ़ेगा और खुशहाली वापिस लौट आयेगी। ग्रामोद्योगों की स्थापना से शोषण का एक अन्य द्वार अर्थात् ऋण या साहूकार की समस्या का भी निवारण हो जायगा तथा गाँवों में श्री-समृद्धि का दर्शन भी होगा।

स्वयंभू ग्राम-श्री

भूमि का ग्रामीकरण ग्रामपरिवार बनने और ग्राम-संकल्प के जाहिर होने की बुनियादी शर्त है। जब तक ग्रामपरिवार बन कर ग्राम-संकल्प जाहिर नहीं होता, तब तक ग्रामोद्योगों की स्थापना भी एक राहत का जैसा काम ही होगा। उसमें से संक्रांति की तेजस्विता का निर्माण नहीं होगा। अतः सर्वोदय-निष्ठा जिस क्रान्ति की कल्पना करती है, वह क्रान्ति है—शोषण के द्वारों का स्थायी रूप से बन्द किया जाना। जहाँ तक ग्राम-श्री का प्रश्न है, वह तो स्वयंभू है। यदि आज तक गाँवों से बाहर गयी हुई सम्पत्ति कभी भी गाँवों में वापिस न जा सके, तो भी कोई चिन्ता की बात नहीं है, बस एक बार भूमि के ग्रामीकरण, ग्राम-परिवार के निर्माण और ग्राम-संकल्प के जाहिर होने की जरूरत है। इतना होने पर वह स्वयंभू ग्रामश्री स्वयं ग्रामों को समृद्ध और स्वाश्रयी बना देगी। हमें तो इतना ही करना है कि उसके प्रवाह के मार्ग बन्द कर दें।

अगर सब मिल कर काम करें—

(रवीन्द्रनाथ ठाकुर)

मुझे एक गाँव में बीच-बीच में जाना पड़ता है। वहाँ बरामदे में खड़े होकर दक्षिण की तरफ देखूँ, तो दिखायी देता है कि पाँच-छह मील तक खेत पर खेत चले गये हैं। बहुत से लोग इस जमीन पर खेती करते हैं। किसीकी दो बीघा जमीन है, किसीकी चार या किसीकी दस बीघा। जमीन का बँटवारा समान नहीं है, उनकी मेड़ें टेढ़ी-मेढ़ी हैं। इस जमीन पर जब खेती होने लगती है, तो सबसे पहले यह बात दीखती है कि हल के लिए बैल जमीन के अनुसार कहीं तो काफी हैं, कहीं काफी से भी ज्यादा हैं, कहीं उससे भी कम। किसान की अवस्था और परिस्थिति के अनुसार कहीं तो खेती यथासमय आरंभ होती है, कहीं समय निकल जाता है। तिस पर टेढ़ी-मेढ़ी मेड़ें होने के कारण हल को बार-बार लौटाना पड़ता है, जिससे बैल का बहुत-सा परिश्रम बेकार जाता है। यदि प्रत्येक किसान केवल अपनी छोटी-सी जमीन को अन्य लोगों की जमीन से संपूर्ण अलहदा करके न देखता, यदि सबकी जमीन एक करके, सब लोग एक होकर, मिल कर खेती करते, तब बहुत कम हल लगते, बहुत-सी बेकार मेहनत बच जाती। फसल कटने पर उस फसल को प्रत्येक किसान के घर-घर में खत्ती में रखने के लिए स्वतंत्र गाड़ी की व्यवस्था और स्वतंत्र मजूरी है। प्रत्येक गृहस्थ को स्वतंत्र खत्ती या अन्नभंडार रखना पड़ता है एवं स्वतंत्र रूप से बेचने का बन्दोबस्त करना पड़ता है। यदि अनेक किसान मिल कर एक भंडार में अनाज रखवाते और एक जगह से बेचने की व्यवस्था करते, तो बहुत-सा फिजूल खर्च और फिजूल मेहनत बच जाती। जिसके पास बहुत मूलधन या पूँजी है, उसको ये ही सुविधाएँ होने से वह ज्यादा मुनाफा कर सकता है, छोटे-छोटे कामों में जो इतना अपव्यय और असुविधा है, वह बच जाती है।

जितने कम समय में जो जितना ज्यादा काम कर पाता है, आज उसीकी जीत है। इसीलिए मनुष्य औजार से काम लेता है। औजार मनुष्य के एक हाथ को पाँच-दस हाथ के समान कर देता है। जो असभ्य हैं और सिर्फ हाथ से मिट्टी खोद कर खेती करता है, उसे हल-धरती के सामने हार माननी ही पड़ेगी। खेती-बाड़ी, कपड़ा बुनना, बोझा उठाना, लाना-ले जाना, तेल निकालना, गुड़ तैयार करना आदि कामों में मनुष्य शरीर के जोर से नहीं जीता है, कला-कौशल से ही जीता है। हल, करघा, बैलगाड़ी, घोड़ा-गाड़ी, तेलघानी आदि सबने मनुष्य के समय के परिमाण को कम करके काम के परिमाण को बढ़ाया है। इसीसे मनुष्य की इतनी उन्नति हुई है, नहीं तो मनुष्य और वनमानुस में ज्यादा फर्क नहीं रहता।

इस प्रकार हाथ के साथ औजार मिला कर हमारा काम चल रहा है। इसी समय भाफ़ और बिजली की सहायता से आजकल के कल-कारखानों की सृष्टि हुई। पर इसका फल यह हुआ कि जिस प्रकार एक दिन औजारों के सामने हाथ को हार माननी पड़ी है, उसी प्रकार मशीन के सामने औजार को हार माननी पड़ी है। इसके बारे में चाहे जितने रोवें-धोवें, सिर पीट कर मरें, इसका और उपाय नहीं है।

तो यह बात हमारे किसानों को भी सोचने का दिन आ गया है, नहीं तो वे बचेंगे नहीं। किंतु यह सब दूसरे के कल-कारखानों के दरवाजे पर खड़े होकर नहीं सोचा जा सकता। खुद हाथ से कलम व्यवहार करें, तो स्पष्ट समझ में आयेगा। यूरोप-अमरीका के सब किसान ही इस रास्ते से हो-हो कर जा रहे हैं। वे लोग कल से खेती करते हैं, कल से फसल काटते हैं, कल से पूले बाँधते हैं, कल से ही खत्ती भरते हैं।

यहाँ अच्छी तरह खेत जोतने के लिए बहुत बार वृष्टि की अपेक्षा करनी होती है। एक दिन बरसात आयी, उस दिन बहुत कष्ट करके हल आदि से थोड़ी-सी जमीन में थोड़ी-सी जोताई हुई। इसके बाद यदि बहुत दिनों तक अच्छी तरह वृष्टि न हो, तो उस साल देर से बुवाई होने के कारण बरसात के पानी से कच्ची फसल बैठ जाती है। इसके बाद फसल काटने के समय दुर्गति होती है। काटने वाले लोग कम हैं, बाहर से मजदूरों को बुलाना पड़ता है। काटते-काटते पानी बरसने लगा, तो कटी फसल खेत में पड़ी-पड़ी नष्ट होती है। जिस काम को एक आदमी नहीं कर सकता उसे पचास आदमी संगठित होकर कर सकते हैं। तुम लोग जो पचास आदमी चिरकाल से पास-पास अलग-अलग खेती करते आ रहे हो, तुम अपनी सब जमीन, हल, बैल, खत्ती और परिश्रम एकत्र कर लो, तो गरीब होने पर भी बड़ी पूंजी का सुयोग अपने आप हो जायगा। किसी किसान की गोशाला में यदि उसके अपने प्रयोजन से सेर भर दूध ज्यादा हो, तो वह उस दूध से व्यवसाय नहीं कर सकता। किंतु एक सौ, डेढ़ सौ किसान अपना-अपना दूध एकत्र करके मक्खन निकालने की मशीन लाकर घी का व्यवसाय कर सकते हैं। यूरोप में इस प्रणाली से व्यवसाय अनेकों जगह होता है। डेन्मार्क आदि छोटे छोटे देशों में साधारण लोगों ने इस प्रकार संगठित होकर मक्खन, पनीर, दूध आदि का व्यवसाय खोलकर देश से दारिद्र्य को एकदम दूर कर दिया है। हम सब व्यवसायों से वहाँ के सामान्य किसान और सामान्य ग्वाले सारी दुनिया के लोगों ने साथ अपने बृहत् संबंध को समझ सके हैं। इस प्रकार सिर्फ रुपये में ही नहीं, मन और शिक्षा से वे बड़े हुए हैं। इसी प्रकार अनेक गृहस्थ और अनेक लोगों के संगठित होकर जीविका-निर्वाह करने का जो उपाय किया है, उसीको यूरोप में 'को-ओपरेटिव' प्रणाली एवं बंगाली में 'समवाय' नाम दिया गया है। मुझे लगता है कि यह को-ओपरेटिव प्रणाली ही हमारे देश को दारिद्र्य से बचाने का एकमात्र उपाय है। हमारे देश में ही क्यों, पृथ्वी के सब देशों में यही प्रणाली एक दिन बड़ी हो उठेगी। आजकल व्यवसाय-वाणिज्य में मनुष्य परस्पर जीतना चाहता है, ठगना चाहता है; यानी अपने रुपयों के जोर से निर्धन की शक्ति को सस्ते दामों खरीद लेना चाहता है। इससे रुपया और क्षमता केवल एक ही जगह पर बड़ी हो उठती है और बाकी जगह में उस बड़े रुपये के चँदवे के नीचे छोटी शक्तियाँ सिर ऊँचा नहीं कर सकतीं। लेकिन 'समवाय' प्रणाली में यानी सब मिल कर काम करने की प्रणाली में चतुराई या विशेष किसी सुयोग से परस्पर एक-दूसरे को जीत कर कोई बड़ा होना नहीं चाहेगा। सब मिल कर बड़े होंगे। यह प्रणाली जब पृथ्वी में फैल जायगी, तब रोजगार के बाजार में मनुष्य-मनुष्य में जो आज एक भयंकर खींचातानी है, वह नहीं रहेगी। यहाँ भी मनुष्य परस्पर एक-दूसरे का मित्र होकर, सहायक होकर मिल सकेगा।

आज हमारे देश में अनेक शिक्षित लोग देश का काम करने की उत्सुकता रखते हैं। कौनसा काम विशेष जरूरी है, यह सवाल अक्सर सुनने में आता है। बहुत से लोग सेवा करके, उपवासी को अन्न देकर, दरिद्र को भिक्षा देकर देश की सेवा करना चाहते हैं। गाँव भर में जब आग लगी है, तब फूँक मार कर आग बुझाने की चेष्टा जैसी है, उसी प्रकार यह भी है। हमारे दुःखों के लक्षणों को बाहर से दूर नहीं किया जा सकेगा, दुःख के कारणों को भीतर से दूर करना होगा। यह यदि करना हो, तो दो काम हैं : एक तो देश के सर्व-साधारण लोगों को शिक्षा देकर जगत् के सब मनुष्यों के मन के साथ उनके मन का योग करा देना—विश्व से विच्छिन्न होकर उनका मन ग्राम्य और एकघराऊ हो रहा है, उन्हें सर्वमानव के मेले में लाकर गौरव देना होगा, भाव की तरफ से उन्हें बड़ा मनुष्य करना होगा—और फिर, जीविका के क्षेत्र में उन्हें परस्पर मिला कर जगत् के सब मनुष्यों के साथ उनके काम का योग करा देना होगा। विश्व से विच्छिन्न होकर सांसारिक दृष्टि से वे दुर्बल और एक-घराऊ हो रहे हैं। यहाँ भी उन्हें मनुष्य के बड़े संसार के महा-प्रांगण में बुला कर लाना होगा, अर्थ की दृष्टि से उन्हें बड़ा मनुष्य बनाना होगा। अर्थात् जड़ के द्वारा वे मिट्टी में प्रशस्त अधिकार पावें और डाल-पत्तों द्वारा हवा और आलोक की तरफ वे परिपूर्ण रूप से व्याप्त हो सकें, यही करना चाहिए। इसके बाद फलफूल अपने आप फलने लगेंगे, किसी को उसके लिए व्यस्त होकर घूमना नहीं पड़ेगा।

(अनु० मदनलाल जैन)

---

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

२१ जून सन् १९५७

लोकनागरी लिपि *

अर्थशास्त्र की मर्यादाएँ

(बीनोबा)

अर्थशास्त्र अैसा शास्त्र नहीं है, जो मनुष्यों का नीयमन करे ! मनुष्य ही अर्थशास्त्र का नीयमन करता है। वस्तु कम पैदा हुअी, तो अर्थशास्त्र कहता है, वस्तु के भाव बढ़ेंगे। भाव क्यों बढ़ने चाहीअे ? अीसलीअे की अधीक लोग खरीदना चाहेंगे ! परंतु वस्तु कम है, थोड़े ही लोग अुसे खरीद सकते हैं, यह अर्थशास्त्र का नीयमन नहीं हुआ। मान लो की कीसी गांव में दूध कम पैदा हुआ, तो दूध के भाव बढ़ेंगे। परीणामतः धनीक ही अुसे ले सकते हैं और गरीब बीना दूध के ही रहेंगे या भाव बढ़ाने के बदले दूध का रेशन कीया जायगा। अतः यह जरूरी नहीं है की वस्तु के भाव बढ़े। अीस तरह अर्थशास्त्र बंधनकारक नहीं है, जैसे की गणीतशास्त्र को मनुष्य नहीं बदल सकता। अर्थशास्त्र तो मनुष्य परीस्थीती के अनुसार बदल सकता है।

कीसी अर्थशास्त्र में यह नहीं लीखा की जीस देश में जमीन कम है, वहां जमीन का दान हो सकता है। पर जहां अर्थशास्त्र की पहुंच नहीं, वहां यह आंदोलन हो रहा है ! भूसमस्या का अेक हल यह हो सकता है की कुछ ही लोगों को जमीन दो और बाकी लोगों के लीअे घंघे छुड़ा करो। दूसरी योजना यह हो सकती है की जमीन सबको मीले और छोटी की पूरती के लीअे कुछ सप्लीमेंट्री अुद्योग दीये जायं। हींदुस्तान के लीअे दूसरी योजना ही ज्यादा अनुकूल है। अीस वास्ते घर-घर में धंधे होना आवश्यक है। परंतु हरेक मनुष्य का संबंध छोटी से जरूर आना चाहीअे। अुसके बीना जीवन परीपूर्ण नहीं बनता और अेकांगी जीवन से आत्मवीकास नहीं हो सकता। पर अीसका मतलब यह नहीं की जमीन के टुकड़े करने चाहीअे। गांव के लोग अपनी अीच्छा से अीस बारे में तय कर सकते हैं। पर वे अेक बड़ा परीवार बनाते हैं, व्यक्तीगत मालकीयत मीटाते हैं, सहयोग देते हैं, तो प्रॉडक्शन जरूर बढ़ेगा। यह सर्वमान्य वीचार है। जमीन जबरदस्ती से या कानून से छीन ली जाय, तो अुससे प्रेम नहीं होगा, वैर बढ़ेगा, द्वेष बना रहेगा और झगड़े भी बढ़ेंगे। अीसलीअे कीसी-न-कीसी तरीके से जमीन की मालकीयत मीटायी जाय, यह हमारा काम नहीं है। हमारा आंदोलन प्रेम का आंदोलन है और प्रेम से ही ताकत पैदा होती है।

(तंजोर, १७-५-'५७)

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ै, ख = अ; संयुक्ताक्षर हलंत-चिह्न से

सर्वोदय की दृष्टि से

अहिंसक प्रतिरक्षा के लिए सुझाव

'बॉम्बे क्रानिकल' में, उसके लंदन स्थित संवाददाता द्वारा भेजा गया निम्नांकित समाचार प्रकाशित हुआ है :

"हाईड्रोजन बम ने कम-से-कम एक अच्छाई की है। इसने आणविक युग में लड़ाई की उपादेयता के बारे में ही सन्देह पैदा कर दिया है।

"यह गांधीजी के अहिंसक प्रतिरोध सिद्धान्त की ओर लोगों का ध्यान ले गया है। सिर्फ थोड़े से, जो कि बहुत ही थोड़े होंगे, ब्रिटेन द्वारा 'निःशस्त्र प्रतिरोध' पर अपनी सुरक्षा-नीति आधारित करने के बारे में सोचने लगे हैं।

"कमान्डर सर स्टीफेन किंग-हाल ने, जो जल-सेना में काफी समय तक सेवा करने के बाद अवकाश पा चुके हैं, एक रायल कमीशन नियुक्त करने की सलाह दी है, ताकि निःशस्त्र प्रतिरोध पर आधारित ब्रिटेन की सुरक्षा-नीति की व्यावहारिकता का पता लगाया जा सके।

"ब्रिटेन के प्रधान मंत्री श्री मैकमिलन द्वारा, जो कि इस बात में विश्वास करते हैं कि उदजन बम से देश की प्रतियोगी शक्ति बढ़ रही है, किसी प्रकार के रॉयल कमीशन के, जिसकी सलाह कमान्डर सर स्टीफेन किंग-हाल ने दी थी, नियुक्त होने की कोई गुंजायश नहीं। लेकिन प्रोफेसर बार्बरा ऊटन का, जो रायल कमीशन के विचार का समर्थन करते हैं, कहना है : 'सुधार का इतिहास इस विचार का समर्थक है कि एक पीढ़ी में जो बात हास्यास्पद है, वही अगली पीढ़ी में व्यावहारिक विवाद का विषय बनती है और तीसरी पीढ़ी में यथार्थतः अनुभव की जाती है।'

"और, निश्चय ही, जब तक दुनिया गांधीजी के सिद्धान्त की बुनियादी बातों को स्वीकार नहीं करती, वह उस पतन को बदल नहीं सकती, जो उसके सामने एकटक देख रहा है।

"इस देश के प्रमुख पत्रों ने सर स्टीफेन किंग-हाल के अहिंसक सुरक्षा सम्बन्धी क्रान्तिकारी विचार को एकदम नजरअन्दाज कर दिया है। लेकिन सर्वश्री एन्थनी ग्रीनउड, फेनर ब्रॉकवे और फ्रैंक अलेन जैसे संसद-सदस्य सर स्टीफेन के विचार पर संजीदगी से विचारने की मांग कर बैठे हैं। कमान्डर किंग-हाल शान्तिवादी नहीं हैं, बल्कि वे आणविक शस्त्रों के बनाये जाने से सम्बन्धित ब्रिटिश सरकार के श्वेत-पत्र का समर्थन करते हैं। लेकिन वे सोचते हैं कि आणविक युद्ध के आत्म-संहारक होने के कारण सुरक्षा के दूसरे तरीकों पर सोचने का वक्त आ गया है, खास तौर से गांधीजी के अहिंसक सत्याग्रह पर सोचने का।"

कमान्डर सर स्टीफेन किंग-हाल तथा ब्रिटेन के संसद-सदस्यों के बीच हुआ विचार-विमर्श विभिन्न देशों के सुरक्षा पर अधिकाधिक खर्च किये जाने से सम्बन्धित व्यक्तियों द्वारा बड़ी दिलचस्पी के साथ पढ़ा जायगा, जिसमें भारत भी शामिल है। धीरे-धीरे सभी देश पुराने या आणविक शस्त्रों द्वारा राष्ट्रीय सुरक्षा की निरर्थकता महसूस कर रहे हैं। लेकिन सबसे जरूरी बात तो यह है कि दुनिया-भर में आर्थिक स्थिति इस ढंग से उन्नत की जाय कि युद्ध काल्पनिक और अनुचित मालूम हो। ऐसा सिर्फ तभी किया जा सकता है, जब काफी बड़े पैमाने पर आर्थिक और राजनीतिक शक्ति का विकेन्द्रीकरण हो।

("आर्थिक समीक्षा" से) —श्रीमन्नारायण

हमारा रेल और तार-विभाग !

उस रोज की बात है। हम एक बहन को ट्रेन में बैठाने के लिए गये। सियालदह जाने वाली ट्रेन की घटना है। भीड़ की तो हद ही नहीं थी ! औरतों के डिब्बे में उसको किसी तरह बैठाया और बाहर आये, तो देखा, मर्दों की भीड़ उस डिब्बे में घुसी जा रही है ! बहुत समझाया गया कि यह औरतों का डिब्बा है ! पर वे काहे मानने लगे ! बात बढ़ी, तो टिकट चेकर या ऐसे ही कोई रेल्वे के अधिकारी आये ! हमने उनसे कहा, तो जवाब मिलता है, "हम क्या करें, साहब, जो करना है, आप करो !" आखिर जब हमने कहा, "किसी हालत में गाड़ी यहाँ से आगे नहीं जा सकेगी," तब कहीं वे होश में आये और फिर मरद सवारियाँ झगड़ा करते-करते उतरीं !

दूसरी घटना मुगलसराय की है। बंबई मेल में सेकेंड क्लास के एक छोटे डिब्बे पर "लेडीज़" कंपार्टमेंट मुद्रित था, पर वह चॉक से कटा हुआ था और भीतर भाई लोग आराम से बैठे हुए थे। ट्रेन-कंडक्टर को बुला कर कहा कि "या तो लेडीज के लिए दूसरा डिब्बा मुहैया कीजिये या इसे कृपा कर खाली करवाइये !" उनका जवाब मिलता है : "मेरी ड्यूटी यहीं तक थी। मैं कुछ नहीं कर सकता, आप नये कंडक्टर को

www.vinoba.in

कहें !" नये साहब के पास पहुँचे, तो वे भी कहने लगे, "मैं अभी ड्यूटी पर आया हूँ, मैं कुछ नहीं कर सकता !" और दो-एक अधिकारियों से कहा, पर कोई सुनवाई नहीं ! अंत में उन्हें हमें कहना पड़ा कि "यदि आप दोनों में से एक भी चीज नहीं करते, तो चेन खींच कर गाड़ी रोक ली जायगी !" पर फिर भी वे चुप ! इतने में वहाँ की हेड् टिकीट कलेक्टर महोदया नसीब से मिल गयीं!आखिर हमने उन्हें कहा कि "अब हमारी जिम्मेवारी खत्म हो गयी, सबको कह दिया है, ट्रेन यहाँ से जा नहीं पायेगी !"

आखिर उन्हें व्यवस्था करनी पड़ी !

बंबई की घटना है। रेल्वे के कंसेशन-दफ्तर में विद्यार्थी-कंसेशन का फार्म लेकर एक छात्र हमारे साथ गये। पहले तो जवाब मिलता है,"जल्दी नहीं होगा, कई दिन लग जायेंगे !" यद्यपि दूसरे दिन ही काम हो जाता है। कई स्थानों पर तो उसी दिन भी हो जाता है। आखिर उनके संमुख दिक्कत पेश की और दूसरे दिन ही काम कर दें, ऐसी विनती की, तब वे धीरे से कहते हैं : "साहब के दफ्तर के चपरासी के लिए और हमारे लिए कुछ दक्षिणा दीजिये, तो काम हो सकेगा !"

सिर पर हाथ मार लेना पड़ा !

मुगलसराय के सेकेंड क्लास की टिकट-खिड़की के पास जा खड़े हुए। भीतर कुर्सी खाली ! आवाज दी। बगलवालों ने कहा, "उधर जाइये।" दूसरी खिड़की पर पहुँचे। वहाँ भी कोई नहीं। तीसरी पर पहुँचे। वह भी थर्ड की थी। बाबू ने कहा, "आइये, बनवा देते हैं !" सेकेंड का टिकट उन्होंने बनवा दिया। हमने सधन्यवाद पैसा चुकाया। वे धीरे से पूछते हैं, "ऊपर कुछ नहीं दीजियेगा ?" हमने कहा, "क्यों भाई ?" उत्तर : "जल्दी जो बनवा दिया !" हमने कहा : "तीन खिड़कियाँ खट-खटा कर आया हूँ और बुलाने से आया हूँ। फिर भी सेकेंड क्लास की खिड़की से टिकट नहीं ही मिला है !" उत्तर : "आपकी मर्जी हो, तो दें !" खेदपूर्वक उस "नम्रता" पूर्ण मांग को भी अस्वीकार कर लौटना पड़ा !

ये घटनाएँ एक के अनुभव की नहीं, अनेकों के अनुभव की हैं। बल्कि ये कुछ भी नहीं हैं। इनसे ज्यादा गंभीर घटनाएँ नित्यप्रति हम अनुभव करते हैं। लाईट बंद, पंखा चालू नहीं, ये तो खैर, नित्य की बातें हैं, परंतु पाखाने में पानी नहीं, कल बिगड़ा है, आदि शिकायतों की ओर तो बराबर ध्यान खींचने पर भी कानों पर जूँ तक नहीं रेंगती ! छोटे-छोटे अधिकारियों को ही कितना दोष दें, जब कि ऊपर का स्तर भी उन्हें लाचार बना देता है !

एक तरफ किराये में वृद्धि हुए जा रही है, दूसरी तरफ रेलवे-मंत्री महोदय फरमाते हैं, "हमने कभी वादा ही नहीं किया कि रेलों में भीड़ कम हो, इसका इंतज़ाम करेंगे !" थर्ड क्लास का मुसाफिर आये दिन हर लाईन पर जानवर से भी बदतर हालत में ट्रेनों में सफर करता है ! लेकिन बेचारा सिर्फ बढ़े हुए दाम देने का ही अधिकारी है और बदले में सिर्फ कष्ट ही उसके प्राप्य है ! ऐसे मौकों पर तो वह मालगाड़ी के डिब्बों में भी यात्रा करने को राजी हो जाता है, इतनी उसकी कम-से-कम माँग रहती है, इतना वह दीन बन जाता है !

लेकिन नागरिक की आवाज आज के आदर्श 'लोकतंत्र' में पशु के चीत्कार से भी गयी-गुजरी बन गयी है ! हर मामले में, हर डिपार्टमेंट में कम-ज्यादा तादाद में यही स्थिति है। तार-विभाग में, सुना है, "गो स्लो" हड़ताल चल रही थी ! वर्धा का तार ३ दिन में, अकोला का एक्सप्रेस तार ४ दिन में, जयपुर का ७ दिन में पहुँचता है, कुछ तार तो गायब ही हो जाते हैं ! क्या नागरिक को यह पूछने का अधिकार नहीं है कि यदि तार-विभाग समय पर तार पहुँचाने की ज़िम्मेवारी से लगातार मुक्त है, तो फिर वह तार स्वीकार ही क्यों करता है ? और यदि स्वीकार करता है, तो फिर पूरे-पूरे ही दाम वह क्यों वसूल करता है ?

एक बात है, जो लिखी जाय ! 'लोकतंत्र' में नागरिक इतना असहाय्य भी कभी बना होगा, नहीं जानते ! लोकतंत्र का आधार लोकशक्ति ही है। स्पष्ट है कि लोकशक्ति के बिना कोई भी लोकतंत्र न कल्याण कारी बन सकता है न समाजवादी ! सरकार को यह देखना है कि जनता ऐसे असहाय्य बनने से यह लोकतंत्र भी सफलतापूर्वक कैसे चल पायेगा ? और जनता को यह देखना है कि उसके मर्ज का इलाज उसकी अपनी शक्ति में निहित है या कहीं अन्यत्र ?

उद्दंडता के तत्त्व नागरिकों में बढ़ते जा रहे हैं, यह हम स्वीकार करते हैं। स्त्रियों के डिब्बों में जबर्दस्ती घुस जाना, रेल्वे-अधिकारियों की भी नहीं मानना, बिना टिकट सफर करके भी गुंडागिरी पर उतारु होना; यह सब उसीका नमूना है ! इस वस्तुस्थिति की ओर हम दुर्लक्ष्य नहीं करना चाहते, परंतु आखिर इसकी वजह क्या है ? इतनी उद्दंडता क्यों होती है और वह क्यों बढ़ती जा रही है, इसके मूल कारणों पर भी हमने कभी सोचा है ? स्पष्ट है कि यह एक प्रतिक्रिया है और प्रतिक्रिया सदा उग्र ही हुआ करती है !

काशी, १५-६-'५७ ——— —लक्ष्मीनारायण भारतीय

'ग्रामदान' की क्रान्ति

(श्रीमन्नारायण)

भारत में भूमि सम्बन्धी समस्या कठिन, किन्तु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और इस समस्या को हल करने के लिए ग्रामदान-आन्दोलन में निहित महान् सम्भावनाओं की ओर कालड़ी के सर्वोदय-सम्मेलन ने एक बार फिर ध्यान आकृष्ट किया है। इस विषय पर अप्रैल के आखिरी हफ्ते में विकास-आयुक्तों के मसूरी सम्मेलन में भी कुछ विस्तार के साथ विचार हुआ था। इस सम्मेलन में प्रधान मंत्री ने ग्रामदान आन्दोलन का स्वागत करते हुए आशा प्रकट की कि सहकारी खेती के प्रयोगों के लिए दान में प्राप्त गाँव एक आदर्श पृष्ठभूमि और उपयुक्त वातावरण प्रदान कर सकेंगे। कालड़ी-सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर मुझे ग्रामदान-आन्दोलन के विभिन्न पहलुओं पर आचार्य विनोबाजी से विचार-विमर्श करने का मौका मिला था। अतः "चलते-फिरते सन्त" की इस नयी क्रान्तिकारी कार्यवाही के बारे में आम जनता के सम्मुख स्पष्टतर चित्र प्रस्तुत करना उपयोगी होगा।

विनोबाजी इस ग्रामदान-आन्दोलन को एक गहरा महत्त्व रखने वाली महान् अहिंसक क्रांति समझते हैं। जरा सोचिये कि एक गाँव के सब काश्तकार आत्म-बलिदान तथा परस्पर-सहयोग की भावना से प्रेरित हो, अपनी सब जमीन भूदान में दे देते हैं और फिर अपने-अपने परिवारों के सदस्यों की संख्या के अनुपात में वापस जमीन पाते हैं। क्या इंसान के दिल और दिमाग को इस अद्भुत तरीके से बदलने से बढ़ कर और भी कोई क्रांति हो सकती है ? कोरापुट, उड़ीसा के ग्रामदान में प्राप्त एक गाँव के एक आदमी को, जिसके पास ग्रामदान से पूर्व २४ एकड़ भूमि थी, पुनर्वितरण के पश्चात् केवल ३॥ एकड़ भूमि मिली, जब कि एक ऐसे आदमी को, जिसके पास बिल्कुल जमीन न थी, अपने परिवार के सदस्यों की संख्या के अनुसार ५ एकड़ प्राप्त हुई। और खूबसूरती तो यह है कि २४ एकड़ जमीन के मालिक ने समर्पण की भावना से साभार विनोबाजी के हाथों ३॥ एकड़ भूमि प्राप्त की !

ग्रामदान में प्राप्त गाँव की जमीन का एक हिस्सा, कम-से-कम कुल जमीन का दसवाँ भाग, कृषि-सहकारी-समिति के रूप में सार्वजनिक खेती के लिए सुरक्षित रहता है। इस सार्वजनिक भूमि से प्राप्त लाभ पंचायत-प्रशासन, ग्राम-पाठशाला, प्रसूति चिकित्सा-गृह, सफाई-सुथराई, सांस्कृतिक गतिविधि और गाँव के मेले-त्योहारों जैसी सामुदायिक सेवाओं पर खर्च किया जाता है। अगर गाँव की बिरादरी चाहे तो सारी जमीन को इकट्ठा कर सरकारी रूप में खेती की जा सकती है। विनोबाजी इस प्रकार की सहकारी खेती के पक्ष में हैं, यद्यपि वे यह कभी नहीं चाहते कि ग्रामवासियों की इच्छा के विरुद्ध गाँव की तमाम जमीन को एकसाथ इकट्ठा किया जाय। अगर ग्रामसभा गाँव की समूची जमीन को आस-पास मिले हुए दो या तीन या चार टुकड़ों में बाँट कर सहकारी खेती करना चाहती है, तो कर सकती है। मुख्य बात यह है कि सहकारी खेत का आकार बहुत बड़ा नहीं होना चाहिए, ताकि खेत में काम करने वाले विभिन्न परिवारों के लोग आपस में निकट सामाजिक सम्पर्क कायम कर सकें। निस्संदेह, सहकारी खेती ऐच्छिक होनी चाहिए, न कि ऊपर से थोपी जानी चाहिए। लेकिन, अगर ग्रामवासियों को सहकारी खेती के फायदे समझाये जायें और कुछ आदर्श खेतों पर प्रयोग किये जायें, तो निश्चय ही ग्रामवासियों को सहकारी खेती से प्राप्त होने वाली सुविधाओं का भरोसा हो जायेगा।

लेकिन, अगर सारे गाँव की जमीन को एक सहकारी खेत के रूप में एकत्र करना संभव न हो, तो विभिन्न परिवारों के लोगों को केवल खेती के लिए, न कि व्यक्तिगत सम्पत्ति के रूप में, कुछ जमीनें दी जा सकती हैं। विभिन्न परिवारों को इस प्रकार प्राप्त होने वाली भूमि न बेची जा सकती है और न रेहन रखी जा सकती है। यह भूमि उन परिवारों के पास तभी तक रहेगी, जब तक कि वह गाँव की बिरादरी की योजनाओं के अनुसार उचित रूप से खेती करते हैं। इन परिवारों से आशा की जाती है कि खेती की विभिन्न प्रक्रियाओं, जैसे कि हल चलाने, घासफूस साफ करने, फसल काटने, सिंचाई, खाद डालने और पैदावार को बेचने में सहकारी तरीकों का अधिकतम उपयोग किया जायेगा। इस प्रकार की पारस्परिक सहायता को एक प्रकार की सहकारी खेती ही समझा जा सकता है। कुछ भी हो, ग्रामदान में प्राप्त गाँवों की जमीन बिरादरी की होगी, न कि व्यक्तिगत परिवारों की। ग्रामसभा विभिन्न परिवारों से मालगुजारी वसूल कर सरकार को अदा करेगी।

www.vinoba.in

विनोबाजी का मत है कि किसी खेत के आकार की वृद्धि के साथ ही जरूरी नहीं कि भूमि की उत्पादनशीलता भी बढ़ जाय। भारत जैसे देश में घनी खेती जरूरी है। बेशक, आराजियाँ बहुत छोटी नहीं होनी चाहिए और न विभिन्न आराजियों के बीच मेंड लगा कर जमीन को बर्बाद होने देना चाहिए। दो आराजियों के बीच एक भिन्न रंग की फसल की पट्टी बोने का तरीका, जो कि दो जमीनों को विभाजन करने का एक जापानी तरीका है, भारत भी अपना सकता है। इसके अलावा, सहकारी तरीके कृषि-प्रक्रियाओं और कार्यकलापों में अधिकाधिक प्रयुक्त किये जाने चाहिए।

जहाँ कहीं गाँव की सारी बिरादरी एक सहकारी खेत के रूप में अपनी जमीन इकट्ठा करने को राजी हो, वहाँ हमें उनका स्वागत करना चाहिए और उधार सिंचाई, बेहतर बीज, आदि की जरूरी सुविधाएँ देकर ग्रामसभा को प्रोत्साहित करना चाहिए। ग्रामदान के इलाके में सामुदायिक विकास-योजनाओं को भी उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए। पाश्चात्य देशों में भूमि का सामूहीकरण मुख्यतः इसीलिए असफल हुआ कि वह लोगों पर उनकी मर्जी के खिलाफ लादा गया। अगर ग्रामदान में प्राप्त गाँवों में ऐच्छिक आधार पर सहकारी खेती हो, तो वह निश्चय ही सफल होगी। मूल सिद्धांत यह होना चाहिए कि जनता में सहकारी खेती के प्रति पूरा उत्साह हो।

ग्रामदान में प्राप्त गाँवों में हर परिवार से एक प्रतिनिधि के आधार पर ग्रामसभाएँ स्थापित की जा रही हैं। इन ग्रामसभाओं में सहकारी खेती, कानूनी मामलों और अन्य विकास-कार्यों के लिए भिन्न-भिन्न उप-समितियाँ हैं। इन ग्रामसभाओं के निर्णय यथासम्भव सर्वसम्मति से होते हैं। विनोबाजी चाहते हैं कि सरकार और सामुदायिक योजना-प्रशासन दान में प्राप्त गाँवों की मदद करे और सामुदायिक योजना और राष्ट्रीय विस्तार सेवा-खंडों की कार्यवाहियों का ग्रामदान विकास-कार्य से समन्वय करे। विनोबाजी इस बात के लिए बहुत उत्सुक हैं कि विभिन्न राज्य-सरकारें शीघ्र ही जरूरी कानून जारी करें, ताकि सरकारी ऋण पाने और ग्राम-समुदाय द्वारा मालगुजारी इकट्ठा करने के लिए दान में प्राप्त गाँवों को कानूनी मान्यता प्राप्त हो सके। इस समय ग्रामदान में प्राप्त गाँवों को कई निश्चित बाधाओं का सामना करना पड़ता है। जैसे ही कोई व्यक्ति ग्रामदान में अपनी सारी जमीन दे देता है, राज्य-सरकार और सहकारी समितियाँ उसे तकावी ऋण या अन्य प्रकार के ऋण देने से इन्कार कर देती हैं। साथ ही, सरकार मालगुजारी इकट्ठा करने के लिए उस व्यक्ति पर बार-बार जोर डालती है। अगर सरकार दान में प्राप्त गाँवों को वैधानिक मान्यता प्रदान करती है और ग्राम-समुदाय को ऋण देती है तथा उसके द्वारा ही मालगुजारी इकट्ठा करती है, तो ये बाधाएँ भी दूर हो सकती हैं। यह खुशी की बात है कि विकास-आयुक्तों के मसूरी-सम्मेलन ने इस बात को स्वीकार किया और जरूरी कानून जारी करवाने के लिए विभिन्न राज्य-सरकारों से कहना निश्चित किया।

विनोबाजी बहुत उत्सुक हैं कि ग्रामदान में प्राप्त गाँव अब एक नयी किस्म की जिन्दगी जीना शुरू कर दें। भूमि के पुनर्वितरण के फलस्वरूप जीवन की नयी मान्यताओं की स्थापना होनी चाहिए। विनोबाजी ग्राम-पुनर्निर्माण के निम्नलिखित चार पहलुओं पर खास जोर देते हैं: (१) भूमि का समुचित पुनर्वितरण और सहकारी खेती, (२) ग्रामोद्योगों का विकास, (३) बुनियादी तालीम का प्रचलन और (४) देशी पद्धतियों के आधार पर और स्थानीय जड़ी-बूटियों की मदद से ग्राम-स्वास्थ्य का आयोजन। बेशक, और भी बहुत से रचनात्मक कार्य हैं, जो कि इन गाँवों में शुरू करने होंगे। लेकिन भूदान, ग्रामोद्योग, बुनियादी तालीम और स्वास्थ्य, वे चार आधारशिलाएँ हैं, जिन पर अन्ततः ग्राम-पुनर्निर्माण की हमारी इमारत को खड़ा करना होगा। विनोबाजी इस बात पर खास जोर देते हैं कि ग्रामवासियों को अपने विकास का स्वयं आयोजन करने के लिए अपनी निजी सूझ-बूझ और आत्म-विश्वास विकसित करने का मौका मिलना चाहिए। निश्चय ही, उनके प्रयासों में राज्य-सरकारें सहायता देंगी; किन्तु एक बहुत बड़े पैमाने पर आर्थिक और राजनीतिक शक्ति का विकेन्द्रीकरण अत्यन्त आवश्यक है। अगर हम भारत में सच्चा लोकतंत्र कायम करना चाहते हैं, तो विनोबाजी के मतानुसार हमें ग्रामराज्य कायम करने के लिए जरूरी कदम उठाने होंगे। विनोबाजी ने कहा है: "जिस हद तक ताकत सरकार से जनता के हाथों में आयेगी, उसी हद तक अहिंसा की शक्ति बढ़ेगी और राज्य की शक्ति क्रमशः क्षीण होकर अन्त में लुप्त हो जायेगी।

तमिलनाड में आचार्य विनोबा कोशिश कर रहे हैं कि एक समूचा तालुका भूदान-यज्ञ में दान-स्वरूप प्राप्त हो। इस प्रकार, भूदान और ग्रामदान-आन्दोलन अधिकाधिक क्रांतिकारी होता जा रहा है। दरअसल, अधिनायकवाद की चुनौती का यही एकमात्र कारगर और कहीं अधिक श्रेष्ठतर उत्तर है। यह तो जीवन की मूल मान्यताओं में क्रांति लाना है और इस उद्देश्यप्राप्ति का साधन अहिंसा, लोकतंत्र तथा हृदय-परिवर्तन है, न कि वर्ग-संघर्ष, घृणा और हिंसा। इसके अलावा, भूदान और ग्रामदान-आन्दोलन जनता के सबसे पिछड़े हुए और गये-बीते भागों को छूने में सफल हुए हैं।

सब लोग महसूस करने लगे हैं कि हमारी विकास-योजना जनता के निम्नतम वर्ग की आर्थिक अवस्था सुधारने में सफल नहीं हुई। हम केवल उन्हींको पेशगी रुपया देते हैं, जिनके पास जमीन है या अन्य किसी प्रकार की सम्पत्ति है। जिनके पास कुछ नहीं है, उन्हें सहायता के रूप में राज्य से प्रायः कुछ नहीं प्राप्त हुआ है। ग्रामदान की क्रांति इस दशा में एक नया मार्ग प्रशस्त कर रही है। ग्रामराज की सहकारिता जनता के दरिद्रतम भाग की अनुभूत आवश्यकताओं को कार्यक्षम रूप से स्पर्श करने में समर्थ है। इसी दृष्टिकोण से ग्रामदान-आन्दोलन को अधिकाधिक प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

("आर्थिक समीक्षा" से)

पहले की आर्थिक प्रणालियों से हमने बहुत नुकसान उठाया है। इसलिए अब हम उस मार्ग पर चल रहे हैं, जो हमारे देश के लिए सबसे अधिक उपयुक्त और अनुकूल है। कारखानों और गाँवों में समाजवाद की स्थापना का जो लक्ष्य हमने अपने सामने रखा है, उसकी ओर हम इसी मार्ग से शनैः शनैः बढ़ रहे हैं।

जबर्दस्ती बनायी गयी सहकारी संस्थाओं से हम इस लक्ष्य की ओर अग्रसर नहीं हो सके। जब हमने इसकी कोशिश की, तो हमें शीघ्र ही पता चल गया कि यह गलत रास्ता है, क्योंकि हमने सिर्फ दूसरों की नकल की थी। पुरानी परिपाटियों से हमें काफी क्षति उठानी पड़ी।

(वेलग्रेड, ५ जून) —राष्ट्रपति टीटो

खादीग्राम के नवप्रयोग

खादीग्राम (मुंगेर) अब तक 'श्रम भारती' अर्थात् श्रम-प्रतिष्ठा की दिशा में श्रम-आधारित रहा। अब हमने अपने जीवन-यापन में श्रम की प्रतिष्ठा द्वारा नव-समाज-निर्माण की ओर तनिक अधिक अग्रसर होने की आकांक्षा से, एक कृषक की कक्षा में रहने की आकांक्षा से इस वर्ष कृषि-कार्य का एक और प्रयोग आरंभ किया है। इस नवीन प्रयोग द्वारा हमें यह अनुभव प्राप्त करना है कि हम एक कृषक की भाँति ईति-भीति आदि प्राकृतिक प्रकोपों के उपरांत उत्पादन में किस सीमा तक सफल हो सकते हैं एवं हम अपने उत्पादन में से आगामी वर्ष में आ उपस्थित होने वाली बाधाओं से मुक्ति पाने के लिए प्रयास-स्वरूप कितनी उपलब्धि कर पायेंगे? ग्रामराज की भूमिका में हमारे इस नवीन प्रयोग की हमारी सफलता-विफलता का अनुभव हमारे उपयोग का होगा।

इसी भाँति खादीग्राम एक अन्य दिशा में भी अग्रसर हो रहा है। यहाँ हर शुक्रवार की रात्रि में भोजनोपरांत सामाजिक चर्चा भी होती है। इस चर्चा में हम अपने कर्म और ज्ञान के समन्वय की साधना पर सतत विचार करते रहते हैं। इस बार सोचा गया कि श्रमभारती जैसे श्रम-आधारित समाज-जीवन का नमूना बनने जा रही है, वैसे शासनमुक्त समाज का भी नमूना वह बने। जगत् में जो-जो शासन-प्रणालियाँ प्रचलित हैं, उनसे भिन्न और उन्नत दूसरी कौनसी शासनप्रणाली हो सकती है, जो सर्वथा दोषमुक्त हो अथवा वर्तमान विद्यमान प्रणालियों से उत्तम हो, इस पर चर्चा की गयी और प्रयोगात्मक रूप से वह यहाँ पर कैसे प्रयुक्त की जा सकती है, इस प्रयोग में हम अब जुट गये हैं। इस तरह खादीग्राम का निधिमुक्ति के साथ तंत्रमुक्ति की दिशा में गतिमान होना ग्रामराज के संदर्भ में निस्संदेह महत्त्वपूर्ण प्रयोग है, जिसकी तरफ सबका ध्यान जाना स्वाभाविक ही है।

—बनवारीलाल दुबे

---

www.vinoba.in

सर्वोदय-संमेलन सामग्री : ३.

तंत्र और निधि-मुक्ति का अर्थ

(धीरेन्द्र मजूमदार)

हमारा उद्देश्य सर्वोदय-समाज की स्थापना है, ग्रामराज उसकी नींव है और ग्रामदान उसका साधन है। हमें एक ऐसे समाज की तरफ कदम बढ़ाना है, जिसमें व्यवस्था तो रहेगी, लेकिन तंत्र और शासन कम-से-कम रहेगा। हमारा ग्रामराज्य उस आदर्श का प्रथम चरण है। तंत्रमुक्ति और निधिमुक्ति का आरंभ हमने अपने भूदान-कार्य से किया है। इसलिए मैं कार्यकर्ताओं के बारे में कुछ कहना चाहता हूँ।

संचित निधि-मुक्ति से मतलब केवल गांधी-निधि से मुक्ति नहीं है। उसका अर्थ अधिक गहरा और व्यापक है। केवल भूदान-समितियों को तोड़ कर सबका संबंध सीधे सर्व-सेवा संघ से जोड़ दिया जाय, तो उससे तंत्रमुक्ति नहीं होगी। उसका परिणाम तो यह होगा कि विकेन्द्रित तंत्र की जगह केन्द्रित तंत्र बन जायगा। हमें तो अंततोगत्वा देश में जगह-जगह फैले हुए लोकसेवकों के आधार पर जनता के द्वारा काम कराना है। व्यवस्था तो रहेगी, पर उसका आधार समितियाँ नहीं, कार्यकर्ता रहेंगे। तंत्रमुक्ति के मानी मंत्रमुक्ति नहीं है। मंत्र नहीं, तो प्रेरणा भी नहीं रहेगी। इसलिए तंत्रमुक्ति के बाद नेता नहीं रहेगा, तो भी मंत्रदाता तो रहेंगे ही। वे संदेश भी देंगे और सलाह भी देंगे। मंत्र में ये दोनों अर्थ आते हैं।

संचित निधि के माने क्या है ? जितना संग्रह है, वह सभी संचित निधि है। वह 'करंट' निधि नहीं है। कुमारप्पा ने दो तरह के अर्थ-शास्त्र की कल्पना की है। एक संचित निधि का अर्थशास्त्र और दूसरा धाराप्रवाही अर्थशास्त्र। बालटी का पानी संचित निधि है, गंगाजी की धारा प्रवाही निधि है। यदि हम संचित निधि से मुक्ति चाहते हैं, तो हमको अपना और अपने कार्य का निर्वाह श्रम के आधार पर चलाना चाहिए। आज तो हमने सिर्फ एक केन्द्रित निधि से मुक्ति पायी है। पर अपनी-अपनी जगह कुछ संपत्ति-दाताओं को खोज लेते हैं और उनकी सहायता से निर्वाह करते हैं। यह केंद्रित निधि नहीं है, फिर भी संचित निधि तो है ही। संपत्ति-दाताओं के संग्रह में से वह हम लेते हैं। संपत्तिदाताओं को आमदनी कहाँ से हुई ? उन्होंने पूँजी जुटायी, मजदूरों से काम लिया, अपने परिश्रम से कमाई नहीं की। वह उनके पसीने का द्रव्य नहीं है। इसके अलावा बाबा ने संपत्ति-दान की एक मर्यादा बतलायी है। जो व्यक्ति संपत्तिदान करेगा, वह अपने दान का विनियोग अपने आप करेगा। हम संपत्तिदान की रकम बटोरने का काम न करें, क्योंकि फिर तो उसके लिए तंत्र खड़ा करना होगा। इस झंझट में हम नहीं पड़ेंगे। जयप्रकाश बाबू के शब्दों में, "संपत्तिदान-आंदोलन बाँट कर खाने का आंदोलन है।" जिसके पास संग्रह है, वह उसका विनियोग बाँट कर खाने की दृष्टि से करे।

जिस प्रकार जयप्रकाश बाबू बाँट कर खाने की बात कहते नहीं थकते, उसी प्रकार बाबा श्रम से निर्वाह करने की बात कहते नहीं थकते। कार्यकर्ता का, उसके कार्य का और संस्थाओं का योगक्षेम प्रत्यक्ष शरीरश्रम के आधार पर होना चाहिए। उदाहरण के लिए गाँवों में फसल काटने का मौसम होता है। काम करने के लिए बहुत लोगों की जरूरत होती है। हमारे कार्यकर्ता दो महीने उसमें लग जायें, तो निर्वाह की चिंता और काम की खोज नहीं करनी पड़ेगी। हमारा आंदोलन जिस मात्रा में श्रमाश्रित होगा, उतनी मात्रा में निधिमुक्त हो जायगा।

पक्षातीत का अर्थ

एक बात और। हमारी पक्षातीत नीति का स्वरूप हमारे सामने स्पष्ट होना चाहिए। पक्षातीत नीति का अर्थ यह नहीं है कि हम सब पक्षों से बाहर हैं, फिर भी सारे पक्ष हमारा अधिकार मानें और हमारी बात पर अमल करें ! सारे पक्षों से अलग रह कर हम अपने को अगर उनसे भिन्न मानेंगे, तो सारे पक्ष हमारे खिलाफ हो जायेंगे। पक्षातीत का अर्थ सब पक्षों से बाहर नहीं, बल्कि हरेक पक्ष के अन्दर, सब पक्षों के अन्दर और ऐसी जनता के अंदर, जो किसी पक्ष में नहीं है। लोकसेवक को तो शून्य बन कर रहना है। शून्य अलग-सलग, अकेला रहेगा, तो उसकी कीमत कुछ नहीं रहेगी। उसके पीछे संख्या चाहिए। जब वह संख्या के साथ होता है, तो उसकी कीमत दसगुनी बढ़ जाती है। इस तरह हमको सबमें शामिल होना चाहिए और सबको अपने में शामिल करना चाहिए।

मंत्र को पकड़ रखें

सबसे अलग रह कर हमें अपनी एक नयी जमात नहीं बनानी है। सारी संस्थाओं को तोड़ कर केवल एक अध्यक्ष रख दिया, तो वह क्या कर सकता है ? केवल दस्तखत कर सकता है। आज तंत्र का तंत्री है, कल केवल हस्ताक्षर का अधिकारी बन गया, तो क्या तंत्र-मुक्ति हो गयी ?

तंत्र-मुक्ति के संकल्प के बाद कार्यकर्ताओं के मन में एक विचार-मंथन शुरू हो गया है। गांधी-आश्रम, खादी-ग्रामोद्योग-समिति, सर्व-सेवा-संघ आदि संस्थाओं को व्यापक कैसे बनाया जाय, इसका विचार वे करने लगे हैं। आज पचास सदस्य हैं, कल दो सौ, चार सौ सदस्य हो जायँ, विधान ही व्यापक बना दिया जाय, तो क्या हम तंत्र से छुटकारा पा सकेंगे ? इससे तो तंत्र कुछ फैल जायगा, लेकिन खत्म नहीं होगा। आज तंत्र से भी अधिक मंत्र को बढ़ाने की आवश्यकता है। हमारा अपना एक मंत्र हो और दूसरों के विचारों के लिए हमारे मन में संपूर्ण आदर हो।

सिद्धराजजी ने एक और सुझाव दिया था कि सर्व-सेवा-संघ का हम एक संदर्भ-विभाग कायम करें। वह कार्यकर्ताओं की कठिनाइयों को सुनेगा और समझेगा और उनके साथ उन कठिनाइयों को हल करने के रास्ते खोजेगा। सिद्धान्त के विषय में कार्यकर्ताओं के मन में जो कठिनाइयाँ पैदा होती हैं, उनके जवाब खोजने में भी यह विभाग उनकी सहायता करेगा। यदि विश्वविद्यालयों के कोई प्रोफेसर इस कार्य का भार संभाल लें, तो उनका विकास होगा और हमारा भी काम होगा।*

* शिविर-कार्यकर्ताओं की बैठक में, सर्वोदयनगर, काळड़ी, १२–५

निर्भय होने की कीमिया !

लोग सदा यह मानते आये हैं कि विद्या देने से अपनी विद्या बढ़ती है। परंतु यह नहीं समझते कि संपत्ति भी देने से बढ़ती है ! किसान अपने घर के सुंदर बीज खेत को देता है, तो वे कम नहीं होते; चार महीने के बाद वह चौगुना पाता है, घर भर जाता है। आज अमेरिका, रशिया क्या करते हैं ? दूसरे देशों को मदद देना चाहते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि देने से कम नहीं होता ! तो, जैसे विद्या देने से बढ़ती है, वैसे संपत्ति भी देने से बढ़ती है। आप प्रेम संपादन करते हैं और आप बीमार पड़े ! तब नौकर रखने से सेवा अच्छी होगी या प्रेमी मित्र निर्माण करने से ? इसलिए समझना चाहिए कि अपना स्वार्थ भी दूसरों को देने से सधता है। हम अपने घर की हवा बाहर नहीं जाने देते, तो बाहर की हवा भी अंदर नहीं आयेगी। आप दरवाजा खोल देते हैं, तो बाहर की स्वच्छ हवा आपको मिलती रहेगी। यह तो प्रतिक्षण हम कर रहे हैं और खराब हवा बाहर फेंकते हैं, स्वच्छ हवा अंदर लेते हैं। उससे हमारा जीवन चलता है। इस वास्ते हम देने से खोते नहीं। पर आज हम देते नहीं, क्योंकि मन में डर है। परंतु देने में भय नहीं है, निश्चिंतता है। सब मित्र बन जाते हैं, तो डर ही फिर किस बात का रह जाता है ?

(श्रीधरकुरुप, पालघाट, ४-६-'५७) —विनोबा

नारायण-शक्ति प्रकट कैसे हो ?

भक्तिमय बन कर नृत्यगान के साथ आप आंदोलन का प्रचार-कार्य करते हैं, तो व्याख्यान से जितना काम नहीं होता है, उतना भक्तिमय बनने से होता है। एकांत में योगी के सामने मोह-माया-शैतान, सब खड़े हो जाते हैं, फिर ३०-३०,४०-४० उपवास करके भले ही उसके साथ लड़ा करो ! लेकिन जहाँ भक्तगण गाते हैं, वहाँ शैतान का दर्शन नहीं होता ! क्राइस्ट, बुद्ध आदि के खिलाफ शैतान खड़ा हुआ। पर वे महावीर थे, उन्होंने तो उसे जीत लिया। लेकिन हारने वाले लोग ज्यादा रहे, जिन्हें कोई नहीं जानता। परंतु भक्तगण समूह बना कर नाचते-गाते हैं, भक्तिरस में डूबते हैं, अपने को ही भूल जाते हैं, तो वहाँ शैतान दर्शन ही नहीं देता और उससे काम भी बनता है। हम चाहते हैं कि ग्रामदान-आंदोलन में ऐसी ही नारायण-शक्ति प्रकट हो, तो काम बहुत बढ़ेगा। —विनोबा

www.vinoba.in

कालडी के सर्वोदय-संमेलन का कलादर्शन

(अनिल सेन गुप्त)

[अ० भा० सर्व-सेवा-संघ के कला-विभाग के श्री अनिल सेन गुप्त का प्रस्तुत लेख कुछ देरी से हमारे पास आया, परंतु कलाकार के रूप में योग देते हुए संमेलन का जो कला-दर्शन उन्होंने किया, वह मनोरम और काव्यमयवाणी में होने से यहाँ दे रहे हैं। इस निर्माण में वे स्वयं भी सहभागी हैं।

लेखक बंगलाभाषी हैं। स्वभावतः उनकी हिंदी पर बंगला शैली की पूरी छाया वर्तमान है। प्रदेशभाषाओं का हविर्भाग हिंदी की संपन्नता बढ़ाता है। हमने लेखक की भाषा-शैली को इसी कारण ज्यों का त्यों रखा है। —सं०]

विहंग-काकली-मुखरित, नारियल-आम्र-कटहल की शीतल छाया में कर्म-चंचल केरल प्रदेश के त्रिचूर जिले में कालडी एक पंचायत-ग्राम है। छोटे-छोटे ग्रामों का समूह। प्रकृति की एक विचित्र लीला-भूमि, उच्च गिरिमाला, शस्य-श्यामल गहन अरण्य, ऊर्मि-मुखर सागर, कलनाद से गुंजित केरल प्रान्त। सागर तथा नदी के वक्ष में सदा संचारमान यहाँ की तरणी की जलक्रीड़ा की तरह यहाँ के उन्मुक्त आकाश में बादल की लीला सदा दिखायी पड़ती है। जन्मभूमि भारत के विश्ववन्दित चरणयुगल शतदल-सहास्य केरल के प्रस्फुटित श्यामल वक्ष में स्थापित हैं। कन्याकुमारी की पावन तपस्या यहाँ के जल-थल अन्तरीक्ष में गंभीर शान्ति से विराजमान है। भारतीय ज्ञान तथा अध्यात्मवाद का पीठस्थान यह कालडी ग्राम हमारी आत्मा के शाश्वत सत्य का जागृत प्रतीक है। जगद्गुरु शंकराचार्य की जन्मस्थली में, तपोवन-सुलभ यहाँ के शान्तिमय वातावरण में, विभिन्न मत, पंथ व धर्मावलम्बी मनुष्यों के सहज-सरल जीवन में एक मधुर मिलन का स्वर झंकृत है।

अखिल भारत नवम सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर देश के विभिन्न प्रान्तों से असंख्य नरनारी कालडी में एकत्रित हुए, भूदान तथा सर्वोदय-आन्दोलन के महान् परिचालक, गांधी-दर्शन के पथ-प्रदर्शक आचार्य विनोबा के नेतृत्व तथा दिग्दर्शन में मई महीने की ९ ता० को सम्मेलन का शुभारम्भ हुआ और १२ ता० को उसकी पूर्णाहूति। देश के विभिन्न अंचलों से शतसहस्र संगठनमूलक कर्मीजन-नेताओं ने भूदान व सर्वोदय-क्रान्ति के आह्वान से आकर्षित होकर कालडी-सम्मेलन के अवसर पर एक नवयुग-रचना का महान् संकल्प ग्रहण किया। इस वर्ष की महत्त्व-पूर्ण घटना थी, सम्मेलन में आते हुए कन्याकुमारी के सागर-संगम में विनोबाजी का पावन संकल्प कि "जब तक ग्रामराज की स्थापना न होगी, यात्रा जारी रहेगी।" इस घटना के आधार पर सम्मेलन में भूदान-आन्दोलन का सर्वात्मक क्रान्तिकारी परिणाम ग्रामदान तथा ग्रामराज की स्थापना हमारा मुख्य लक्ष्य माना गया। इस वातावरण में सम्मेलन में योगदान देने वाले व्यक्तियों के हृदय में आशा, आनन्द, शक्ति तथा प्रेरणा गहरे रूप में संचारित हुई। "सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम्" के मंत्र से उद्दीप्त होकर शान्ति तथा कल्याण का शुभ व्रत-पालन का सर्वोदय-कर्मी-वृन्दों ने निश्चय किया।

सर्वोदय-नगरी के प्रवेश-पथ में विशाल, सुसज्जित तोरण अपना उदार बाहु बढ़ा कर एक प्रेमपूर्ण आकुल प्रार्थना व्यक्त कर रहा था—"आओ, भारत के अधिवासी तथा विश्वासी! ज्ञानी-अज्ञानी, ऊँच-नीच, धनी-दरिद्र, जाति-धर्म तथा मत-पथ को भुला कर इस महाभारत के महामानवरूपी सागर के किनारे मिलन के पुण्यतीर्थ क्षेत्र में साम्ययोग की पूर्णाहुति के लिए। जीवन की सब क्षुद्रता को छोड़ कर ही मनुष्यत्व के पूर्ण अधिकार में मनुष्य की प्रतिष्ठा तथा विकास संभव है। यही तुम्हारा महान् कर्तव्य है, यही युग की मांग है।

प्रतिनिधि-परिपूर्ण, शत-शत कुटीर, यातायात-कोलाहलमय विभिन्न प्रवेशद्वार, उद्वेलित समुद्र-सदृश जनता-परिपूर्ण सभा-मंडप, सभा-मञ्च, तपोवनतुल्य विनोबा-कुटीर, सहस्रों मनुष्यों की हँसी-गान से झंकृत ग्रामीण भारत की शिल्पमय चित्त की चिरन्तन आनन्दोत्सव की प्रतीक खादी-ग्रामोद्योग-प्रदर्शनी, भूदान तथा सर्वोदय-आन्दोलन का क्रान्तिकारी चित्ररूपायन भूदानमंडप, सामाजिक तथा आर्थिक क्रान्ति की प्रतीक अम्बर चरखा-प्रदर्शनी, विचारविप्लव का प्रधान हथियार, साहित्य-प्रदर्शनी, केरल की लोककला तथा नाट्यशाला, इन सबने कुछ दिन के लिए सर्वोदय नगरी के विराट समारोह में सबके मन में एक अपरिसीम आनन्द तथा भावमय वातावरण संचारित किया।

अहिंसा, प्रेम, मैत्री तथा करुणा के साक्षात् अवतार भगवान् बुद्ध के २५०० वें जन्मोत्सव के स्मरण से सर्वोदयनगरी तथा प्रदर्शनी की परिकल्पना, निर्माण, सजावट, चित्रण आदि काम में जो शैली प्रयोग की गयी, उसमें बौद्धकालीन शिल्प-सभ्यता का प्राधान्य सुस्पष्ट रूप में परिलक्षित था। इस सभ्यता ने सुदीर्घ काल तक भारत के साथ समग्र विश्व का आत्मिक, बौद्धिक तथा व्यावहारिक अच्छेद्य मैत्री-बन्धन स्थापन किया था। अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ के चित्र-विभाग के भाई-बहनों ने मिल कर सम्मेलन तथा प्रदर्शनी की कार्यकारिणी-समिति के सहयोग से विभिन्न मंडप-प्रवेश-द्वार, कुटीर, मंच, प्रदर्शनी-गृह आदि की परिकल्पना, निर्माण, सजावट आदि को सुसम्पन्न किया। इसके अतिरिक्त भूदान तथा सर्वोदय-प्रदर्शनी के सारे काम भी उन्हीं लोगों ने किये। बाँस, बेंत, फूस, नारियल-ताल के पत्ते, भिन्न-भिन्न प्रकार की चटाई, टोकरी, बाँस व ताड़पत्रों की छत्री, मिट्टी के चित्रित घड़े, पट, शोले के फूल, चंदमाला, आम्र-पल्लव, केला-गाछ, रांगोली आदि ग्रामोत्पन्न सामग्री से तथा ग्रामीण शिल्प-कला से सारे निर्माण और साज-सज्जा के काम किये गये। शिल्प-कर्म लोक-शैली पर आधारित था। गत वर्षों की तुलना में इस वर्ष की प्रदर्शनी वृहत्तर तथा महत्त्वपूर्ण थी। केरल प्रदेश में प्रचलित करीब सर्व प्रकार की खादी तथा ग्रामोद्योग की विभिन्न उत्पादन-प्रक्रिया और उत्पादित वस्तुओं का प्रदर्शन किया गया। स्थानीय तथा देश-विदेशों के अगणित दर्शकों के मन में इसका आनन्द और औत्सुक्यपूर्ण असर पड़ा। प्रदर्शनी का मुख्य आकर्षण सुनिर्मित सुसज्जित, सुविशाल प्रवेशद्वार और भूदान-मंडप था। इस मंडप में करीब १०० म्यूराल पेंटिंग, १०० चार्ट व पोस्टर, २५ तैल व टेम्पारा चित्र, कुछ नक्शे, ग्राफ और फोटो आदि के जरिये भूदान तथा सर्वोदय-आन्दोलन का आर्थिक, सामाजिक, नैतिक, आध्यात्मिक, आदि विभिन्न धाराओं की गतिप्रगति की एक क्रमिक क्रान्तिकारी परिणति पेश की गयी। संवेदनशील मानवीय माधुर्य-रस की चित्र-प्रदर्शनी ने समागत जनता के मन-प्राण में एक गहरी भावना का संचार किया।

११ मई को प्रातःकाल विनोबाजी ने अपने यात्रीदल के साथ भूदान-प्रदर्शनी का अवलोकन किया। परम आग्रह और उत्सुकता के साथ सारी चित्र-प्रदर्शनी को देख कर उन्होंने परम सन्तोष प्रकट किया। कर्मीवृन्द के मन में इससे असीम आशा, आनन्दमय प्रेरणा जागृत हुई। हमारी आगामी यात्रा में इसको हम आशीर्वाद के रूप में अपना परम पाथेय मानेंगे।

चित्र-विभाग के भाई-बहनों के साथ के प्रसंग में उन्होंने भूदान-आन्दोलन को सफल बनाने के लिए विचार-प्रचार के क्षेत्र में चित्र-कला की वैप्लविक भूमिका का उल्लेख किया। कला-सेवकों को उनका सादर आवाहन और दिग्दर्शन मिला। विनोबा की इस महान् इच्छा और मंगलमय विधान को जीवन का पावन व्रत मानते हुए हमारे देश के कला-प्रेमी तथा शिल्प-साधक भाई-बहनों से हमारी विनम्र प्रार्थना है कि इस महान् क्रांति में शामिल होकर हम अपनी शिल्प-साधना को सफलता की ओर ले जावें।

वितरण और उत्पादन

जब तक सारा समाज एकरस नहीं बनेगा, तब तक प्रॉडक्शन नहीं बढ़ेगा। अर्थशास्त्र के नाम पर बहुत राक्षसी विचार हम करने को तैयार होते हैं। जो अर्थ-शास्त्र मानवता के विरुद्ध बोलेगा, वह मानवी शास्त्र नहीं, राक्षसी शास्त्र है। पहले प्रॉडक्शन बढ़ने दो और बाद में बँटवारा करेंगे, ऐसा क्या हम परिवार में करते हैं? वहाँ दोनों ही साथ-साथ होता है न? किसीने कहा था कि बाबा गरीबी बाँटता है। तो जो देश में है, सो बाँटता है। दारिद्र्य भी बाँटता है और अमीरी भी बाँटना चाहता है! यह समझ लें कि सुख बाँटने से बढ़ता है और दुख बाँटने से घटता है। प्रॉडक्शन बढ़ाना चाहते हैं, तो उत्साह तो चाहिए न? खाने के लिए मिले, तो उत्साह आयेगा। अभी श्री आर. के. पाटील (जो प्लेनिंग कमीशन के सदस्य थे) अपने कुछ साथियों के साथ चीन गये थे। वहाँ सरकार की ओर से कुछ योजना चलती थी। उस योजना में जनता उत्साह से भाग लेती है। यह उत्साह लोगों में क्यों है, यह देखने के लिए वे गये थे। देखा कि वहाँ भूमिहीनों को जमीन दी गयी है, इसलिए लोगों में उत्साह है। यह बिलकुल स्पष्ट वस्तु है। प्रॉडक्शन बढ़ाने में उत्साह आता है, जब उसको लगता है कि हमारी भी कुछ पूछताछ देश में है। इस वास्ते प्रॉडक्शन के नाम पर वितरण की बात छोड़ते हैं, तो वह खतरनाक बात है। बिना वितरण के प्रॉडक्शन नहीं बढ़ेगा।

(कोल्लेनगोड़ा, पालघाट, २७-५-'५७)

—विनोबा

---

www.vinoba.in

कार्यकर्ताओं के साथ प्रश्नोत्तर

प्रश्न : समाज में दुर्योधन, दुःशासन जैसे अनेक व्यक्ति हैं। कृष्ण भगवान् जैसे भी जब दुर्योधन का परिवर्तन नहीं करा सके, तो हम इन लोगों का परिवर्तन कैसे करेंगे ?

विनोबा : नये जमाने में पुराने तरीके काम में नहीं आते हैं। नये जमाने की नयी समस्याएँ होती हैं और उसके सुलझाने के तरीके भी नये ढंग के होते हैं। आज विज्ञान के कारण देश की सीमा बढ़ गयी है, सारे मानव एक-दूसरे से अधिक संबंधित हैं।

दुर्योधन-दुःशासन को ऐतिहासिक पात्र समझें और महाभारत को भी इतिहास ही समझें, तो वह इतिहास व्यास भगवान् को लिखने की क्या ज़रूरत थी ? और अगर वह इतिहास था, तो हम सारे २६ करोड़ लोग बार-बार उसे क्यों पढ़ते ? महाभारत को कभी हम और आप इस ऐतिहासिक अर्थ में नहीं पढ़ते हैं। उसको हम व्यक्तिगत चरित्र नहीं समझते हैं। महाभारत की शुरुआत में व्यास ने लिखा है कि धर्म विचार की कल्पना हो, इसलिए मैं यह लिख रहा हूँ। आखिर के तीन श्लोकों में व्यास ने महाभारत का सार लिखा है कि मोह से कैसे-कैसे कार्य होते हैं और मोह मुक्ति किस तरह होती है। एक दुर्योधन दूसरे किसी शख्स के साथ लड़ता है, तो उसको कथा व्यास भगवान् को लिखने की क्या जरूरत थी और उन्होंने लिख भी डाली, तो उसे हम बार-बार क्यों पढ़ते ? उसमें भगवत्गीता जैसी आख्यायिका, मोक्ष-प्रवृत्ति आदि चीजें क्यों डालीं ? ये सारी सोचने की बातें हैं। पुरानी चीजें पुराने तरीके से सोचनी चाहिए। आज हमारे सामने बहुत बड़े सवाल पेश हैं। दुनिया में आज ऐसे शस्त्रास्त्र बने हैं कि सारी दुनिया के विनाश की नौबत आ गयी है।

इसलिए इस आंदोलन में किसी एक व्यक्ति का, किसी एक दुर्योधन के हृदय का परिवर्तन करने का सवाल नहीं है। हम तो सारे समाज की भावना का परिवर्तन करने जा रहे हैं। हममें अगर किसी एकाध व्यक्ति में परिवर्तन लाने की शक्ति नहीं है, तो वह शक्ति इस युग में है। वह तो दुर्योधन और उसके भाइयों का झगड़ा था, उसमें युग-धर्म का कोई सवाल नहीं था। आज तो युग-धर्म यह कह रहा है कि सब एक हों, सबकी भावनाएँ एक हों। २५०० गाँव अपनी जमीन की मालकियत मिटा दें, ऐसी मिसाल महाभारत में कहाँ मिलेगी ? बल्कि उसमें तो लिखा है कि दुर्योधन पांडवों से कहता है, सुई के सिरे की जितनी मिट्टी भी देने के लिए हम तैयार नहीं हैं ! श्रावस्ती में बुद्ध भगवान् को चातुर्मास में निवास करने के लिए उतनी मुहरें लेकर ही जमीन दी गयी। उसी श्रावस्ती में भूदान में १०० एकड़ जमीन मिली। तो क्या बाबा बुद्ध भगवान् से बड़ा बन गया ? नहीं, जमाना ही बदल गया है।

पहले व्यक्ति से व्यक्ति की माँग थी, आज जमाने की माँग है। इसलिए किसी खास दुर्योधन का परिवर्तन कराने का सवाल हमारे सामने नहीं है, वह कार्य तो हम ईश्वर को ही सौंप दें। हमारे सामने तो युग-धर्म का लाभ उठा कर सर्वसामान्य मानव-समाज के परिवर्तन की बात है, किसी खास विशिष्ट दुर्योधन की नहीं। इसलिए सारा जमाना हमें अनुकूल है, यों समझ कर ऐसी श्रद्धा से काम में लग जाइये।

प्रश्न : हम तंत्रमुक्त तो हो गये, लेकिन यंत्रमुक्त नहीं हुए हैं !

विनोबा : तंत्रमुक्त भी हम हुए हैं, क्या यह कह सकेंगे ? जब बिना तंत्र के चारों ओर खूब काम बढ़ रहा है, ऐसा दर्शन होगा, तो हम तंत्रमुक्त हुए हैं, ऐसा कहा जायगा। परंतु काम में से भी हम मुक्त हो गये, तंत्र भी गया और काम भी गया, तो मुक्ति नहीं है !

प्रश्न : आपके सामने आकर दान देने वाले लोग किसानों को बेदखल भी करते हैं। तो क्या वह दान उनका ढोंग नहीं है ?

विनोबा : दुनिया में और अपने देश में कितने प्रकार के, कितनी तरह-तरह के अन्याय हो रहे हैं, उसका दर्शन हमको होता है। अन्याय बहुत हो रहा है, यह हम जानते हैं, परंतु हम यह कहना चाहते हैं कि वह अन्याय अन्तःकरण की बुराई से नहीं हो रहा है। अगर हम यह विश्वास रखें, तो उसका उपाय हमें मिल सकता है। इधर लोग जमीन दान में देते हैं और वे ही लोग बाद में बेदखल करते हैं। आप कहते हैं कि वे लोग ढोंगी हैं, आपके सामने आकर के दान देते हैं, परंतु लोगों के सामने उनकी असलियत खुल जाती है। हम आपकी राय से सहमत हैं। परन्तु उसमें इतना ही फर्क है कि जब वे बाबा के सामने आते हैं, तभी उनकी सच्ची असलियत खुल जाती है। उनकी सच्ची असलियत है, दान-रूपी प्रेम। वे ढोंगी हैं, शोषण करते हैं, बेदखल करते हैं, यह सारा परिस्थिति का और उपाधि का परिणाम है। उनका खुद का वह स्वरूप नहीं है। भूदान देते समय जो प्रेम प्रगट होता है, वही उनका सच्चा स्वरूप है। मनुष्य का सच्चा स्वरूप आइने में प्रगट होता है। जहाँ स्वच्छ व्यक्ति सामने आयेगा, वहाँ सच्चा स्वरूप ही प्रगट होगा। हम अपने को स्वच्छ समझते हैं, इसीलिए दावा करते हैं कि उनका सच्चा स्वरूप हमारे सामने प्रगट होता है। यह सही है कि आज दुनिया की परिस्थिति से वे लोग डरे हुए हैं। कब क्या होगा, ऐसी भय की अवस्था में हैं। इसलिए छोटे लोभों में पड़ कर वे ऐसे बुरे काम कभी कर लेते हैं।

प्रश्न : सरकार भूदान के काम में मदद दे रही है, तो उसके बारे में आपकी क्या राय है ?

विनोबा : छः साल के प्रयत्न के बाद मदद करने का और ध्यान देने का सरकार को अगर आज सूझ रहा है, तो उसको देरी ही हुई है। इसीलिए वे सहानुभूति दिखाते हैं, तो हम उनके शुक्रगुजार हैं। हम उनकी मदद लेने को राजी हैं, परंतु हमेशा हमको यही डर लगता रहा है कि सरकार के नाम से कहीं लोग ही अपने को अनाथ न समझें। यह न हो कि 'सरकार करेगी, सरकार करेगी' इसलिए हम न करें ! सरकार मदद देती है, इसलिए ग्रामदान देते जाओ, ऐसा करेंगे, तो उससे गाँव की ताकत नहीं बढ़ेगी। वह स्वराज्य नहीं होगा। ग्रामदान करने से सरकार मदद देगी, इस वृत्ति से ग्रामदान होते हैं, तो उसमें भी कुछ भला तो है, क्योंकि ग्रामदान स्वयमेव अपनी योग्यता रखता है। किसी लाभ के लोभ से ग्रामदान होता है, जमीन की मालकियत लोग छोड़ते हैं, तो उसको हम गलत काम नहीं समझते हैं, अच्छा ही काम वह हुआ, परंतु वह उत्तम काम नहीं हुआ। उत्तम काम तो वह है, जहाँ गाँव स्वयमेव अपनी ताकत से काम करता है और जो कुछ मदद मिलती है, उसके आधार पर स्वीकार करके वह अपनी अक्ल कायम रखता है।

(कालड़ी, ता. १०-११ मई १९५७)

सर्वोदय-संमेलन-संदेश :

...इस नौवें सर्वोदय-सम्मेलन के स्थल तथा काल का ध्यान रखते हुए मुझे उसके अंदर ईश्वरीय योजना का पदचिह्न दिखायी देता है। १० मई '५७ को भारत के पहले स्वातंत्र्य-आंदोलन की शताब्दि मनायी जा रही है। उसी दिन आपका सम्मेलन भी हो रहा है। अब भूदान के इस बीज का वृक्ष बन गया है और मुझे आशा है कि इसके मधुर फल आप ग्राम कालडी में एकत्रित करेंगे।

भारत स्वतंत्र हो जाने के पश्चात् गांधीजी ने "ट्रस्टीशिप"—सिद्धान्त का निर्वचन आरंभ किया था। दिनांक १ जून, १९४७ के "हरिजन" में एक प्रश्न का उत्तर देते हुए उन्होंने स्पष्ट कह दिया था कि जमींदार अथवा पूँजीपति अपने आप 'ट्रस्टी' न बन जायँ, तो कानून द्वारा पंचायत यह काम कर सकती है। दिनांक २५ अक्तूबर, १९५२ के "हरिजन" में श्री प्यारेलाल नायर ने "ट्रस्टीशिप"—सिद्धान्त का वह अंतिम प्रारूप दिया है, जिसे गांधीजी ने स्वीकृति दे दी थी। इस प्रारूप में बतलाया गया है कि संपत्ति की मिलकियत का प्रजातंत्रीय कानून द्वारा नियंत्रण "ट्रस्टीशिप" सिद्धान्त से असंगत नहीं है। इसी विचार-धारा को आचार्य विनोबा ने आगे चलाया है, जब दिनांक १७ अप्रैल, १९५७ के "भूदान" में वे कहते हैं कि "कानून अनिवार्य रूप से हिंसा नहीं है। जिस कानून के पीछे प्रजा की इच्छा का नैतिक बल है, वह एक अहिंसक विधि बन जाता है।"

मुझे आशा है कि ग्राम कालड़ी में आप इस तकसूत्र से अन्त तक पहुँचेंगे और एक ऐसा क्रांतिकारक तथा साहसपूर्ण पग उठायेंगे, जिससे न केरल की भूमिसमस्या का, अपितु सारे संसार की राजनैतिक समस्या का हल करने का रास्ता खुलेगा।

नयी दिल्ली, —चिं० द्वा० देशमुख

भूल-सुधार : ता० २४ मई '५७ के 'भूदान-यज्ञ' में पृष्ठ १० के दूसरे स्तंभ में ऊपर से १८वीं पंक्ति में पाठक कृपया "नानाभाई दवे" की जगह "नानाभाई भट्ट" पढ़ें।

समाप्त

www.vinoba.in

मध्यप्रदेश में बाबा राघवदासजी

ता. ९ जून की प्रातः उत्तर प्रदेश की भूदान क्रांति के अग्रदूत बाबा राघवदासजी मध्यप्रदेश में अपनी ग्रामदान-पदयात्रा के निमित्त खंडवा पधारे। पं० श्री माखनलालजी चतुर्वेदी, सेठ गोविंददासजी, श्री रामचंद्रजी नागड़ा-श्री वि.स. खोड़ेजी आदि ने आपका स्वागत किया। दोपहर को स्थानीय गांधी-भवन में आयोजित महिलाओं की सभा में प्रवचन करते हुए बाबाजी ने बताया कि "भारतीय समाज में माँ का स्थान बहुत बड़ा है। व्यक्ति को जीवन के प्रारंभ से ही उससे प्रेरणा मिलती रहती है। माँ के बिना परिवार की कल्पना नहीं हो सकती। भूदान का अर्थ सही माने में सच्चे परिवार बनाना है। जैसे परिवार में सबका हक होता है, वैसे ही समाज में सबको हक मिले, इसकी कोशिश भूदान यज्ञ कर रहा है। मध्य-प्रदेश में हमारी यात्रा के निमित्त यह पहला ही कार्यक्रम है—और वह भी माताओं की सभा से प्रारंभ हो रहा है। हमें उम्मीद है कि सबका प्रेमपूर्वक आशीष मिलेगा।"

रात्री को गांधी चौक में आयोजित सभा में भाषण देते हुए अध्यक्षपद से सेठ गोविंददासजी ने कहा कि बाबा राघवदासजी की इस पद यात्रा से मध्यप्रदेश में भूदान-आन्दोलन को बल मिलेगा।

बाबाजी ने अपने भाषण में कहा कि कल से इस प्रदेश में हमारी यात्रा प्रारंभ हो रही है। हम एक विद्यार्थी के नाते इस प्रदेश में घूमना चाहते हैं और उसके लिए आप सबका आशीवाद चाहते हैं। स्वराज्य-प्राप्ति के बाद हम देश के आर्थिक और सामाजिक मसले हल नहीं कर सके हैं। भारत जैसे कृषि-प्रधान देश में खेती-उत्पादन तथा भूमि के समान वितरण-संबंधी समस्याओं का हल हमें करना है। इन सबका हल हम ग्रामदान में देखते हैं।

ग्रामदान एक बांध के समान है। जैसे बांध के द्वारा जलराशि से बिजली पैदा कर लाखों एकड़ भूमि को सिंचाई होती है और यों ही बह जाने वाली जलराशि का समुचित उपयोग हो जाता है, वैसे ही ग्रामदान मनुष्य की बिखरी शक्तियों के संग्रह द्वारा मानव-जाति को विनाश के मार्ग से बचा लेने का प्रयास है।

इसके बाद श्री करणभाई का प्रेरणाप्रद भाषण हुआ।

संवाद-सूचनाएँ :

द्वितीय बिहार प्रादेशिक सर्वोदय-संमेलन

आगामी २८-२९ और ३० जून को बिहार का द्वितीय प्रादेशिक सर्वोदय-संमेलन पूसा रोड (दरभंगा) में होना निश्चित हुआ है। बिहार की भिन्न-भिन्न रचनात्मक संस्थाओं और प्रवृत्तियों के प्रतिनिधि तथा भूक्रांति में लगे हुए कार्यकर्ता संमेलन में एकत्र होंगे।

संमेलन में विचारार्थ निम्न विषय रखे गये हैं : (१) ग्रामदान; (२) विकेन्द्रीकरण और (३) नयी तालीम। ग्रामदान-चर्चा का उद्घाटन श्री जयप्रकाशजी, विकेन्द्रीकरण की चर्चा का संयोजन श्री लक्ष्मी बाबू और श्री ध्वजा बाबू तथा नयी तालीम की चर्चा का संयोजन श्री रामशरण उपाध्यायजी करेंगे। संमेलन में श्री धीरेन्द्र मजूमदार भी रहेंगे। २७ जून को खादी-ग्रामोद्योग-संमेलन भी होगा।

सेवाग्राम में सेमिनार

—ग्रामदान में मिले हुए गाँवों में ग्राम-निर्माण का काम ही अभी नयी तालीम का भावी कार्यक्रम है। नयी तालीम के इस भावी कार्यक्रम पर चर्चा-विचार करके काम की एक रूपरेखा तैयार करने के लिए आगामी ५, ६ और ७ जुलाई '५७ को सेवाग्राम में एक अध्ययन गोष्ठी (सेमिनार) का आयोजन किया गया है।

हिंदुस्तानी तालीमी संघ, सेवाग्राम —आशादेवी

—श्री रामकृष्ण वर्मा लोकसेवक जि० फर्रुखाबाद, मोहमदाबाद नामक स्थान पर १०० शिक्षार्थियों के सघन पदयात्रा-शिक्षण-शिविर का आयोजन कर रहे हैं। यह शिविर २१ जून से ३० जून तक रहेगा।

हर व्यक्ति अणु-परीक्षणों का विरोध करे !

हर विचारवान् व्यक्ति का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह वर्तमान अणु और उदजन बम-परीक्षणों की शृंखला को रुकवाने में अपनी सामर्थ्य का प्रयोग करे, क्योंकि इन परीक्षणों से संपूर्ण मानव-जाति भीषण खतरे में पड़ गयी है।

विश्व की सारी छोटी-बड़ी शक्तियों को एक रूप में यह आवाज बुलन्द करनी चाहिए कि आणविक परीक्षणों को अविलम्ब रोका जाय। इन अणु-उदजन-परीक्षणों से युद्ध के समान ही मानवता को कष्ट मिल रहा है। इसलिए इन परीक्षणों को तत्काल बन्द कर देना चाहिए। हमारे प्रधान मंत्री नेहरूजी भी इस दिशा में प्रयत्नशील हैं। उन्होंने अपनी पूरी सामर्थ्य से इन परीक्षणों का विरोध किया है।

मैं स्वयं इस आवाज में कि अणु-उदजन-परीक्षण अविलंब स्थगित कर दिये जायं, अपनी आवाज मिला रहा हूँ। परन्तु मैं और मेरे साथी भूदान-आंदोलन में लगे हैं, जिससे भूमिहीनों को भूमि दी जा सके और उनकी गरीबी दूर की जा सके। पर मेरे सभी साथी विश्वशांति के पक्षपाती हैं, जब कि आज कई राष्ट्र इन विध्वंसकारी अस्त्रों को शांति-प्रदायक समझते हैं। यह उनकी भूल है। अस्त्रों से शांति कभी भी संभव नहीं। वैज्ञानिकों ने इन शक्तियों का अनुसंधान इसलिए नहीं किया था कि उससे मानवता को ही नष्ट कर दिया जाय! वरन् उनका उद्देश्य तो मानव की समस्याओं को विज्ञान द्वारा दूर करना रहा था।

कुछ 'बड़े' व्यक्ति यह भी कहते हैं कि इन परीक्षणों से अधिक हानि नहीं होती, परन्तु हानि चाहे कैसी हो, हानि तो हानि ही है और रहेगी। एक समय ऐसा भी आ सकता है कि थोड़ी-थोड़ी हानि एक विशाल हानि का रूप ले ले! —विनोबा

(विश्वशांति-परिषद्, कोलंबो के लिए भेजे हुए संदेश से। —"हिंदुस्तान" से)

विनोबाजी की पदयात्रा का कार्यक्रम

जिला पालघाट : जून ता० २१. पुन्नयुरकुलम्, २२. पोन्नाइ, २३. एडप्पाल, २४. कुट्टीपुरम्, २५. कोलात्तुर, २६. अंगाडीपुरम्, २७ मल्लपुरम्।

पत्र-व्यवहार का पता : मार्फत : सर्व-सेवा-संघ, पो० परली PARALI (PALGHAT : KERAL)

वर्धा जिले में प्रथम ग्रामदान

ता० १४ जून को वर्धा जिले में टुमनी गाँव के निवासियों ने सारी जमीन श्रमदान-सहित ग्रामदान में अपण कर दी है। —ठाकुरदास बंग

विषय-सूची

१. समाजवाद का सर्वोत्तम साधन : ग्रामदान	जयप्रकाश नारायण	१
२. आज का यक्ष प्रश्न और उसका उत्तर	अच्युतराव पटवर्धन	२
३. ग्रामदान की भूमिका	दादा धर्माधिकारी	२
४. तीन काल की कहानी : किशनू की जबानी!	किशन सहाय पुरोहित	३
५. ग्रामदान के लिए देश का आवाहन	सिद्धराज ढड्ढा	३
६. "भाइयो, मेरा भी हिस्सा लेकर जाइये!"	पं० वेंकाब राव	४
७. राहत का नहीं, क्रांति का युग	नेमिशरण मित्तल	४
८. अगर सब मिल कर काम करें—	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	५
९. अर्थशास्त्र की मर्यादाएँ	विनोबा	६
१०. सर्वोदय की दृष्टि से -		
अहिंसक प्रतिरक्षा के लिए सुझाव!	श्रीमन्नारायण	६
हमारा रेल और तार-विभाग!	लक्ष्मीनारायण भारतीय	६
११. 'ग्रामदान' की क्रान्ति	श्रीमन्नारायण	७
१२. तंत्र और निधि मुक्ति का अर्थ	धीरेन्द्र मजूमदार	९
१३. काल्डी के सर्वोदय-संमेलन का कला-दर्शन	अनिल सेन गुप्त	१०
१४. कार्यकर्ताओं के साथ प्रश्नोत्तर	विनोबा	११
१५. भूदान-आंदोलन-समाचार, सूचनाएँ	...	१२

सिद्धराज ढड्ढा, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव-भूषण-प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, काशी, टे० नं० १२८५

www.vinoba.in